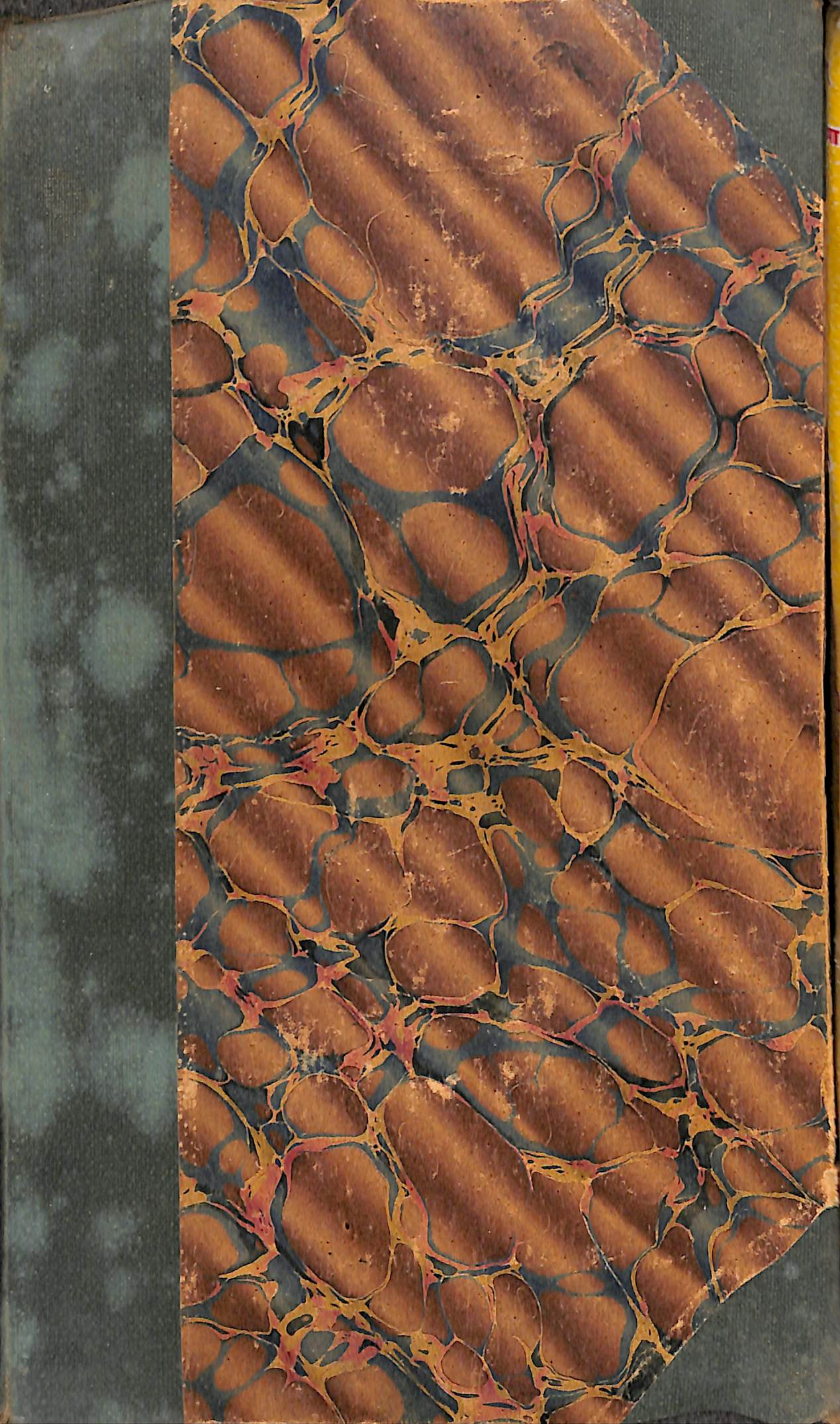


श्रीभगवद्गीता

मुंशीहरिवंशलालकृतभाषाटीकासहित

जिसमें

श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द परब्रह्मस्वरूप नेनिजभक्त अर्ज्जुनसे आत्मस्वरूप बोधार्थपरमज्ञानोपदेशकियाहै

वही

वाजपेयि पण्डित रामसेवकके प्रबन्धसे

चौथीबार

लखनऊ

मुंशीनवलकिशोर (सी, आई, ई,) के छापेख़ाने में छपी

फरवरी सन् १८८५ ई०

कापी राइट महफ़ूज़है बहक़ नवलकिशोर प्रेस

११ जुज़ २ वर्क़

भगवद्गीतानवलभाष्यका विज्ञापनपत्र ॥

प्रकटहो कि यह पुस्तक श्रीमद्भगवद्गीता सकल निगम पुराण स्मृति सांख्यादि सारभूत परम रहस्य गीताशास्त्र का सर्व्व विद्यानिधान सौशील्य विनयौदार्य्य सत्यसंगर शौर्य्यादि गुणसंपन्न नरावतार महानुभाव अर्जुनको परम अधिकारी जानके हृदयजनित मोहनाशार्थ सब प्रकार अपार संसार निस्तारक भगवद्भक्ति मार्ग दृष्टिगोचर करायाहै वही उक्तभगवद्गीता वज्रवत् वेदांत व योगशास्त्रान्तर्गत जिसको अच्छे २ शास्त्रवेत्ता अपनी बुद्धिसे पार नहीं पासक्ते तब मन्दबुद्धी जिनको कि केवल देश भाषाही पठन पाठन करनेकी सामर्थ्य है वह कब इसके अन्तराभिप्रायको जानसक्तेहैं—और यह प्रत्यक्षही है कि जब तक किसी पुस्तक अथवा किसी बस्तुका अन्तराभिप्राय अच्छे प्रकार बुद्धिमें न भासितहो तब तक आनन्द क्योंकर मिलै इस प्रकार संपूर्ण भारतनिवासी श्रीमद्भगवत्पदाब्जरसिकजनोंके चित्तानन्दार्थ व बुद्धिबोधार्थ सन्तत धर्म्म धुरीण सकल कलाचातुरीण सर्व्व विद्या विलासी भगवद्भक्त्यनुरागी श्रीमान् मुंशी नवलकिशोरजी (सी, आई, ई) ने बहुत साधन व्ययकर फर्रुखाबाद निवासि पंडित उमादत्तजी से इस मनोरंजन वेद वेदान्त शास्त्रोपरि पुस्तकको श्रीशंकराचार्य्य दिर्मित भाष्यानुसार संस्कृतसे सरलदेश भाषामें तिलक रचाय नवलभाष्य आख्यसे प्रभात-

श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीभगवद्गीता ॥

धृतराष्ट्रउवाच॥धर्म्मक्षेत्रेकुरुक्षेत्रेसमवेतायु
युत्सवः ॥ मामकाःपाण्डवाश्चैव किमकुर्वतस
ञ्जय १॥संजयउवाच ॥दृष्ट्वातुपाण्डवानीकं व्यूढ
न्दुर्य्योधनस्तदा ॥ आचार्य्यमुपसंगम्य राजा
वचनमब्रवीत् २ पश्यैतान्पाण्डुपुत्राणामाचार्य
महतीञ्चमूम् ॥ व्यूढान्द्रुपदपुत्रेण तवशिष्येण
धीमता ३ ॥

धृतराष्ट्रने सञ्जय से यह प्रश्नकिया कि धर्मक्षेत्र
अर्थात् धर्म्मका उत्पत्तिस्थान कुरुक्षेत्रमें हमारे और
पाण्डवके योद्धायुद्धकीइच्छासे मिलेहुये क्याकरतेहैं १
सञ्जयनेउत्तरदिया कि दुर्य्योधनने पाण्डवकीसेना व्यूह
रचनासे स्थित भई हुई देखकरद्रोणाचार्य्य के निकट
जायकर यह कहा २ कि पाण्डुके पुत्रोंकी बड़ी सेना
देखिये कि राजाद्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न और आपके
बुद्धिमान शिष्यने व्यूढ अर्थात् व्यूह रचना घेरीहै ३ ॥

अत्रशूरामहेष्वासाभीमार्जुनसमायुधि॥युयुधानोविराटश्च द्रुपदश्चमहारथः ४ धृष्टकेतुश्चेकितानःकाशिराजश्चवीर्य्यवान्॥पुरुजित्कुन्तिभोजश्च शैब्यश्चनरपुंगवः ५ युधामन्युश्चविक्रांत उत्तमौजाश्चवीर्यवान् ॥ सौभद्रोद्रौपदेयाश्चसर्वएवमहारथाः ६ अस्माकन्तुविशिष्टायेतान्निबोधद्विजोत्तम ॥ नायकाममसैन्यस्य संज्ञार्थंतांब्रवीमिते ७ भवान्भीष्मश्चकर्णश्चकृपश्चसमितिञ्जयः॥ अश्वत्थामाविकर्णश्चसौमदत्तिस्तथैवच ८॥

और उससेनामें बड़े २ धनुषधारीशूर युद्धमें भीम और अर्जुन के समान युयुधान और राजा बिराट और राजा द्रुपद महारथहैं ४ धृष्टकेतु और चेकितान नाम राजा और काशीका पराक्रमी राजा और राजापुरुजित् और कुन्तिभोज और शैब्यराजा नरोंमें श्रेष्ठ हैं ५ और युद्धमें प्रवृत्त राजाउत्तमौजा पराक्रमी राजायुधामन्यु राजासौभद्र अर्थात् अभिमन्यु अर्जुनकापुत्र और द्रौपदी के पांचौपुत्र ये सब महारथी हैं ६ और अपनीसेना के सेनापतियोंके नाम हे महाराज ब्राह्मणोंमें उत्तम आप के जानने के हेतु कहताहूं ७ आप और भीष्माचार्य्य कर्ण कृपाचार्य्य युद्धके जीतनेवाले अश्वत्थामा बिकर्ण और वैसेही सोमदत्तिभूरिश्रवा नामकये सबहैं ८ ॥

अन्येचबहवःशूरामदर्थेत्यक्तजीविताः ॥ नानाशस्त्रप्रहरणाःसर्वेयुद्धविशारदाः ९ अपर्य्याप्तन्तदस्माकं बलंभीष्माभिरक्षितम् ॥ पर्य्याप्तंत्विदमेतेषांबलंभीमाभिरक्षितम् १० अयनेषुचसर्व्वेषु यथाभागमवस्थिताः ॥ भीष्ममेवाभिरक्षन्तुभवन्तस्सर्वएवहि ११ तस्यसञ्जनयन्हर्षंकुरुवृद्धःपितामहः ॥ सिंहनादंविनद्योच्चैः शंखंदध्मौप्रतापवान् १२ ततःशंखाश्चभेर्य्यश्च पणवानकगोमुखाः ॥ सहसैवाभ्यहन्यन्त सशब्दस्तुमुलोभवत् १३ ॥

और भी बहुतसेशूर मेरे हेतु जीवत्याग करनेवाले और नाना शस्त्रसे युद्धकरनेवाले और सबयुद्धमें समर्थ हैं ९ भीष्मसे रक्षित हमारी सेना अपर्य्याप्तअर्थात् असमर्थहै और भीमसे रक्षित इनकीसेना पर्य्याप्त अर्थात् ठनी देखपडती है तात्पर्य्ययह है कि भीष्म दोनों के पितामह होनेसे किसीके पक्षमें नहींहैं और भीमसेन तो अपनेहीदलका पक्षपाती है १० सब व्यूहके प्रवेश मार्गमें यथाभाग खडेहोकर आपलोग भीष्महीकी रक्षा कीजिये ११ गुरुओंके पितामह प्रतापी भीष्माचार्य राजादुर्य्योधनके संतोषकेहेतु ऊंचेस्वरसे सिंहकीनाईं गर्जकरशंखबजातेभये १२ तिसकेपीछेशंखभेरीपणवआनक और गोमुखइत्यादिबाजे उससमयसेनाकेलोगऐसे

बजायेकिउसकाबड़ाशब्दसबदिशाओंमेंव्याप्तहुआ १३ ॥

ततःश्वेतैर्हयैर्युक्ते महतिस्यन्दनेस्थितौ ॥ माधवःपाण्डवश्चैव दिव्यौशंखौप्रदध्मतुः १४ पाञ्चजन्यंहृषीकेशोदेवदत्तंधनंजयः ॥ पौण्ड्रन्दध्मौमहाशंखंभीमकर्म्मावृकोदरः १५ अनन्तविजयंराजाकुन्तीपुत्रोयुधिष्ठिरः ॥ नकुलःसहदेवश्चसुघोषमणिपुष्पकौ १६ काश्यश्चपरमेष्वासः शिखण्डीचमहारथः ॥ धृष्टद्युम्नोविराटश्चसात्यकिश्चापराजितः १७ ॥

इसके अनन्तरश्वेतघोड़े के भारीरथपर श्रीमाधव और पाण्डव अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र और अर्ज्जुन बैठेहुये दिव्यशंखबजातेभये १४ पाञ्चजन्यनामकशंख श्रीकृष्णचन्द्रजी और देवदत्तनामकशंख अर्ज्जुन और पौण्ड्रनामकमहाशंखघोरकर्म्मकरनेवाले वृकोदरअर्थात्भीमबजातेभये १५ अनन्तविजयनामकशंखकुन्तीकेपुत्र राजायुधिष्ठिर और सुघोषनामक शङ्ख नकुल और मणिपुष्पकनामक शंखसहदेव बजातेभये १६ श्रेष्ठधनुषकाधारणकरनेवालाकाशिराज और महारथ शिखण्डी और धृष्टद्युम्न औरराजाबिराटऔर पराजय न होनेवालासात्यकी १७ ॥

द्रुपदोद्रौपदेयाश्चसर्वशःपृथिवीपते ॥ सौभद्रश्चमहाबाहुःशंखान्दध्मुःपृथक्पृथक् १८ सघो

घोधार्त्तराष्ट्राणांहृदयानिव्यदारयत् ॥ नभश्चपृ थिवींचैव तुमुलोऽभ्यनुनादयन् १९ अथव्यवस्थि तान्दृष्ट्वाधार्त्तराष्ट्रान्कपिध्वजः ॥ प्रवृत्तेशस्त्रसम्पा ते धनुरुद्यम्यपाण्डवः २० हृषीकेशन्तदावाक्य मिदमाहमहीपते ॥ अर्जुनउवाच ॥ सेनयोरुभयो र्मध्ये रथंस्थापयमेऽच्युत २१ ॥

और राजाद्रुपद और द्रौपदीके पांचोपुत्र और महा- बाहु अभिमन्यु ये सब पृथ्वीपति हे धृतराष्ट्र अपना २ शंख पृथक् २ बजातेभये १८ इनशंखोंकेशब्द धृतराष्ट्रके पुत्रोंका हृदय फाड़कर आकाश और पृथ्वीमें व्याप्तहो प्रतिध्वनिकरतेभये १९ इसकेअनन्तर युद्धसन्निधिधा- र्त्तराष्ट्र अर्थात् कुरुसेना नायकोंको कपिध्वजपाण्डव अ- र्थात् अर्ज्जुन शस्त्रपातमें प्रवृत्तदेख अपना धनुष चढ़ा- कर २० हेमहीपति धृतराष्ट्र श्रीकृष्णसे यह वचन कहा किदोनोंसेनाकेबीच हेअच्युत हमारारथखड़ारक्खो २१ ॥

यावदेतान्निरीक्ष्येहंयोद्धुकामानवस्थितान् ॥ कैर्म्मयासहयोद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे २२ यो त्स्यमानानवेक्ष्येहं यएतेऽत्रसमागताः ॥ धार्त्तरा ष्ट्रस्यदुर्बुद्धेर्युद्धेप्रियचिकीर्षवः २३ सञ्जयउ वाच ॥ एवमुक्तोहृषीकेशोगुडाकेशेनभारत ॥ सेन योरुभयोर्म्मध्येस्थापयित्वारथोत्तमम् २४ ॥

कि जबलों जो युद्ध करने की इच्छासे खड़े हैं उन्हें देखों कि संग्राम में हमको किन किनके साथ युद्ध करना पड़ेगा २२ जो लोग यहां युद्धकी इच्छासे आयेहैं उन्हें देखें कि वे धृतराष्ट्र के कुबुद्धीपुत्र दुर्य्योधनके प्रियकी इच्छा करने वालेहैं २३ सञ्जय धृतराष्ट्रसे कहतेहैं कि हे भारत धृतराष्ट्र गुडाकेशअर्थात् निद्राके जीतने वाले अर्ज्जुन ने हृषीकेश अर्थात् इन्द्रियों के अधिपति श्री कृष्णसे जबयों कहा तब दोनों सेना के बीचमें रथखड़ा करके २४ ॥

भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषांचमहीक्षिताम् ॥ उवाच पार्थपश्यैतान् समवेतान्कुरूनिति २५ तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थः पितॄनथपितामहान् ॥ आचार्य्यान्मातुलान्भ्रातॄन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा २६ श्वशुरान्सुहृदश्चैवसेनयोरुभयोरपि॥तान्समीक्ष्यसकौन्तेयःसर्व्वान्बन्धूनवस्थितान् २७

भीष्म द्रोणाचार्य्य और सबराजों के सन्मुख श्री कृष्ण यहकहतेभये कि हे पार्थ अर्थात् कुन्तीके पुत्र अर्ज्जुनये जो कुरुसेना के नायक खड़ेहैं उन्हेंदेखो २५ तहां अर्जुन देखते भये कि चचेरेभाई और द्रोण भीष्म-पितामह और गुरू और मामा और भाई बन्धु और पुत्रपौत्र और मित्र इत्यादि जो वहां उपस्थित थे २६ ऐसेही श्वशुर और सनेही और सम्पूर्ण बन्धु इत्यादि

दोनों सेनाके लोगों को अर्ज्जुनने खडेहुये देखके २७॥

कृपयापरयाविष्टोविषीदन्निदमब्रवीत् ॥ अर्ज्जुनउवाच ॥ दृष्ट्वेमंस्वजनंकृष्ण युयुत्सुंसमुपस्थितम् २८ सीदन्तिममगात्राणिमुखंचपरिशुष्यति ॥ वेपथुश्चशरीरेमेरोमहर्षश्चजायते २९ गाण्डीवंस्रंसतेहस्तात्त्वक्चैवपरिदह्यते ॥ नचशक्नोम्यवस्थातुंभ्रमतीवचमेमनः ३० ॥

बडीकृपासे आविष्टहो और व्याकुल हो यह कहत भये कि हेकृष्ण इनस्वजनों को युद्धकी इच्छासे खडे हुये देखकर २८ मेरे सब अंग गलते जातेहैं और मुख सूखताहै और मेराशरीर कंपायमानहोताहै और रोमांच खडे होतेहैं २९ और गाण्डीव धनुष मेरे हाथसे गिराजाता और देहतप्तहोता और खडानहीं रहसक्ता और मेरा मन भ्रमताहै ३० ॥

निमित्तानिचपश्यामि विपरीतानिकेशव ॥ नचश्रेयोऽनुपश्यामिहत्वास्वजनमाहवे ३१ न कांक्षेविजयंकृष्णनचराज्यंसुखानिच ॥ किन्नो राज्येनगोविंद किम्भोगैर्ज्जीवितेनवा ३२ येषामर्थेकांक्षितन्नो राज्यंभोगाःसुखानिच ॥ तइमेऽवस्थितायुद्धे प्राणांस्त्यक्त्वाधनानिच ३३ ॥

हे केशव निमित्तभी विपरीत देखताहौं कि संग्राम

में स्वजनको मारकर क्याशुभ देखूंगा ३१ हेकृष्णमहा-
राज युद्धमें विजयकी भी कांक्षानहीं और न राज्य सुख
की कि राज्य और भोगलें हमको क्याकरना और बिना
स्वजन प्राणरखके भी क्याकरनाहै ३२ जिनके अर्थ
राज्य भोग और सुखकी हम कांक्षाकरते हैं वेहीलोग
युद्धमें प्राण और धनत्यागकर खडेहैं ३३ ॥

आचार्य्याःपितरःपुत्रास्तथैवचपितामहाः ॥
मातुलाःश्वशुराःपौत्राः श्यालाःसम्बन्धिनस्तथा
३४ एतान्नहन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपिमधुसूदन ॥
अपित्रैलोक्यराज्यस्य हेतोःकिन्नुमहीकृते ३५
निहत्यधार्त्तराष्ट्रान्नः काप्रीतिस्स्याज्जनार्द्दन ॥
पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः ३६ ॥

ये सबआचार्य्य और चचेरे भाई पुत्र पितामहमामा
श्वशुर पौत्र शाला और सम्बन्धी लोगहैं ३४ हे मधुसू-
दन येलोग यदि हमको मारेंगे तोभी हम इनको मारने
की इच्छा नहींकरते त्रैलोक्य के राज्यके हेतुभी ऐसा
नहीं करने चाहते फिरकेवल पृथ्वीके लिये क्यों ऐसा
करें ३५ हे जनार्द्दन धृतराष्ट्रके पुत्रादिकों को मारनेसे
हम को क्या इष्टहोगा और इनआततायियों अर्थात्
अधर्मियोंको मारकर केवलपापहीके आश्रयहोवेंगे ३६ ॥

तस्मान्नार्हावयंहंतुं धार्त्तराष्ट्रान्स्वबांधवान् ॥
स्वजनंहिकथंहत्वा सुखिनःस्याममाधव ३७ यद्य

प्येतेनपश्यंतिलोभोपहतचेतसः ॥ कुलक्षयकृतं दोषंमित्रद्रोहेचपातकम् ३८ कथन्नज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम् ॥ कुलक्षयकृतंदोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्द्दन ३९ ॥

इसहेतुसे अपने स्वबन्धु धृतराष्ट्रके पुत्रादिकों को मारने को हमलोग योग्यनहीं हैं हेमाधव श्रीकृष्ण अपने स्वजनको मारकर कैसे हमलोग सुखी रहेंगे ३७ राज्य के लोभसे इनकी मति मारी गई इससे येलोग कुलका क्षय और मित्रद्रोहकापातक नहीं देखते ३८ हेजनार्द्दन हमलोग बिचारमान हैं इसलिये कुलकाक्षय होनेके दोष होनेसे निवृत्ति उपाय क्यों न देखें ३९ ॥

कुलक्षयेप्रणश्यन्तिकुलधर्म्माःसनातनाः॥धर्म्मेनष्टेकुलंकृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत ४० अधर्म्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्तिकुलस्त्रियः ॥ स्त्रीषु दुष्टासुवार्ष्णेय जायतेवर्णसंकरः ४१ संकरोनरकायैव कुलघ्नानांकुलस्यच ॥ पतंतिपितरोह्येषां लुप्तपिंडोदकक्रियाः ४२ ॥

कुलके नाशहोनेसे सब सनातन कुल धर्म्म नष्टहोते हैं और धर्म्म नष्टहोनेके अनन्तर सम्पूर्ण अधर्म्म व्याप्त होता है ४० हे कृष्ण अधर्म्म व्याप्त होनेमें कुलकी स्त्री निन्दित होतीहैं और उनकेनिंदित होनेसे बर्णसंकर जन्मताहै ४१ और वर्णसंकर कुलनाशक और कुलके

नरकहोने का कारण होताहै और उनके पितरभी लुप्त पिण्डोदक क्रियाहोकर पतित होते हैं ४२ ॥

दोषैरेतैःकुलघ्नानांवर्णसंकरकारकैः ॥ उत्सा द्यन्तेजातिधर्म्माः कुलधर्म्माश्चशाश्वताः ४३ उत्सन्नकुलधर्म्माणां मनुष्याणांजनार्द्दन॥ नरके नियतम्बासो भवतीत्यनुशुश्रुम ४४ अहोबत महत्पापं कर्तुम्व्यवसितावयम् ॥ यद्राज्यसुख लोभेनहन्तुंस्वजनमुद्यताः ४५ ॥

वर्णसंकर कारकदोषोंसे कुलनाशकोंका जाति धर्म्म और वर्णाश्रम धर्म्मभी लोप होता है ४३ हे जनार्द्दन लुप्त कुल धर्मवाले मनुष्योंको ऐसा मानतेहैं कि नियत करके नरकमें बास होताहै ४४ हमलोग राज और सुख के लोभसे अपने बन्धु बर्ग के नाशकरने के हेतु उद्युक्त होतेहैं सो यह महापाप में प्रवृत्तहोनाहै ४५ ॥

यदिमामप्रतीकार मशस्त्रंशस्त्रपाणयः॥ धार्त्त राष्ट्रारणेहन्युस्तन्मेक्षेमतरम्भवेत् ४६॥ संजयउ वाच॥ एवमुक्त्वार्जुनःसंख्येरथोपस्थउपाविशत्॥ विसृज्यसशरंचापंशोकसंविग्नमानसः ४७॥

इतिश्रीमद्भीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीतासूपनिष त्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादेऽ र्ज्जुनविषादयोगोनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

यदि हम कि उन्हें नहीं रोकते और शस्त्र नहीं रखते वे शस्त्रधारी लोग धृतराष्ट्र के पुत्र युद्ध होनेमें हमें मारेंगे तो हमारा बड़ा कल्याण है ४६ सञ्जय धृतराष्ट्र से कहते हैं कि अर्ज्जुन इस प्रकारके वचन संग्राममें कहकर रथकेऊपर धनुषबाण त्यागकर शोकसे संतप्त मन होस्थिर हो बैठा ४७ ॥

अर्जुनके खेदका पहिला अध्यायसमाप्त हुआ १ ॥

सञ्जयउवाच ॥ तन्तथाकृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ॥ विषीदन्तमिदंवाक्यमुवाचमधुसूदनः १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ कुतस्त्वाकश्मलमिदंविषमेसमुपस्थितम् ॥ अनार्य्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्ज्जुन २ क्लैब्यंमास्मगमःपार्थनैतत्त्वय्युपपद्यते ॥क्षुद्रंहृदयदौर्बल्यंत्यक्त्वोत्तिष्ठपरंतप३

संजय धृतराष्ट्र से कहते हैं अर्जुन जो अपने बन्धुबर्गों को देखकर कृपासे व्याप्त आंखोंमें आंशू भरे खेद से पूर्णथा श्रीकृष्णचन्द्रउस्से यह कहते भये १ भगवान् कहते हैं हे अर्जुन ऐसे बिषम दिन में तुमको यहमोह कहांसे प्राप्त भया जिस मोहको पंडितलोगोंने नहीं अंगीकार किया कि यहस्वर्ग और कीर्त्तिका नाशकहै २ हे पार्थ अर्जुन भयको मत प्राप्तहो यहतुम्हारे योग्य नहीं क्योंकि तुमशत्रुको संताप देनेवालेहो यहतुच्छ दुर्बलता हृदय की छोड़कर उठखड़े हो ३ ॥

अर्जुनउवाच ॥ कथंभीष्ममहंसंख्ये द्रोणंच मधुसूदन ॥ इषुभिःप्रतियोत्स्यामिपूजार्हावरि सूदन ४ गुरूनहत्वाहिमहानुभावान् श्रेयोभोक्तुं भैक्ष्यमपीहलोके ॥ हत्वार्थकामांस्तुगुरूनिहैव भुंजीयभोगान्रुधिरप्रदिग्धान् ५ नचैतद्विद्मः कतरन्नोगरीयो यद्वाजयेमयदिवानोजयेयुः ॥ यानेवहत्वानजिजीविषाम स्तेऽवस्थिताःप्रमुखे धार्त्तराष्ट्राः ६ ॥

अर्जुन कहते हैं हे मधुसूदन संग्राममें भीष्माचार्य्य और द्रोणाचार्य्य को जोपूजाकरने के योग्यहैं उन्हें हम कैसे बाणोंसे पीड़ादें ४ महातेजस्वी गुरुओंके मारनेसे यह अच्छाहै कि इसलोकमें भिक्षासे उदरपोषण करना और जो गुरूके अर्थकी कामनासे व्याप्तहैं उनके मारने से भी जो भोग इहां प्राप्त होगा सो रुधिरसे लिप्त अर्थात् निन्दित कहलावेगा ५ यह हम नहीं जानते कि क्या हमारे करनेके योग्य है यदि हम लोग उनसे जीतैंगे या वे लोग हमको पराजयकरेंगे पर जिनके मा-रनेसे हमारा जीना नहीं होगा सो धृतराष्ट्रके बेटे हमारे सामने खड़े हैं ६ ॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामित्वांध-र्म्मसम्मूढचेताः ॥ यच्छ्रेयःस्यान्निश्चितम्ब्रूहित

न्मेशिष्यस्तेऽहंशाधिमांत्वांप्रपन्नम् ७ नहिप्रप
श्यामिममापनुद्याद्यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणा
म् ॥ अवाप्यभूमावसपत्नमृद्धं राज्यंसुराणामपि
चाधिपत्यम् ८ ॥ संजयउवाच ॥ एवमुक्त्वाहृषी
केशं गुडाकेशःपरन्तप ॥ नयोत्स्यइतिगोविन्द
मुक्त्वातूष्णींबभूवह ९ ॥

कादरतारूप दोषसे मेरास्वभाव आच्छादित भयाहै
और धर्म्मकी बासनासे मेराचित्त रहितहै इसलिये मैं
आपसे पूंछताहौं कि जो निःसन्देह मंगलहो सो मुझ
को उपदेश कीजिये क्योंकि हम आपके शिष्य और
शरणागतहैं आपशिक्षा कीजिये ७ वह हम नहीं देखते
जो हमारे इन्द्रियों के सुखानेवाले शोकको दूरकरैं
क्योंकि इसलोकमें शत्रु रहित सम्पूर्णराज्य और देव-
तोंका आधिपत्यभी प्राप्त होनेसे वह शोक नहीं निवृत्त
होसक्ता ८ संजय धृतराष्ट्रसे कहतेहैं हे शत्रुतापन धृत-
राष्ट्र गुडाकेश अर्जुनने श्रीकृष्णसे यह कहिके कहा कि
हे गोबिंद हम न युद्धकरेंगे फेरि चुपरहा ९ ॥

तमुवाचहृषीकेशः प्रहसन्निवभारत ॥ सेनयो
रुभयोर्म्मध्येविषीदन्तमिदंवचः १० ॥श्रीभगवा
नुवाच ॥ अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च
भाषसे ॥ गतासूनगतासूंश्चनानुशोचन्तिपण्डि

ताः ११ नत्वेवाहंजातुनाशं नत्वन्नेमेजनाधिपाः॥ नचैवनभविष्यामः सर्वेवयमतःपरम् १२ ॥

हे भारत धृतराष्ट्र हृषीकेश श्रीकृष्णने जो दो सेनाके बीच खेदित होखड़ा रहाथा तिस अर्जुनसे हँसकर यह बातकही १० भगवान् कहते हैं जो शोककरने के योग्य नहीं उनका तुम शोक करतेहो और फिर विवेकियों कीसी बार्त्ताकरतेहौ क्योंकि बुद्धिमान्लोग जो इष्टमित्र मरगये या मरेंगे उनका शोक नहीं करते ११ ऐसा नहीं कि हम और ये सब राजा कभी हैं और कभी नहीं मरनेके अनन्तर हम सब न होंगे ऐसा भी नहीं १२॥

देहिनोऽस्मिन्यथादेहेकौमारंयौवनंजरा ॥ तथादेहान्तरप्राप्ति धीरस्तत्रनमुह्यति १३ मात्रास्पर्शास्तुकौन्तेयशीतोष्णसुखदुःखदाः ॥ आगमापायिनोऽनित्या स्तांस्तितिक्षस्वभारत १४ यंहिनव्यथयंत्येतेपुरुषंपुरुषर्षभ॥समदुःखसुखं धीरंसोऽमृतत्वायकल्पते १५ ॥

क्योंकि जैसा उसदेहमें बाल्य यौवन और वृद्धता तीनों अवस्थाप्राणी कोक्रमसे होती हैं वैसेही देहान्तर की भी प्राप्तिहोती है इसलिये बुद्धिमान्लोग देहछूटनेसे समाप्ति न समझ मोह को नहीं प्राप्तहोते १३ हे भारत हे कुन्तीके पुत्र अर्जुन इन्द्रियोंकी वृत्तिको जब विषयोंसे सम्बन्ध होताहै तब देहीको शीतउष्ण सुख

और दुःख इत्यादि की प्रतीति होती है और यह सम्बन्ध आगमा पायी अर्थात् उत्पत्ति नाश शील और अनित्यहै इसलिये इनको सहन करना उचितहै १४ जिस पुरुषको इन्द्रियोंकी वृत्तियां विषय सम्बन्धसे पीड़ा नहीं देतीं और जिनको सुख और दुःख का अनुभव तुल्यहै हे अर्जुन वहीधीर प्राणीमोक्षप्राप्तिके योग्यहै१५॥

नासतोविद्यतेभावो नाभावोविद्यतेसतः ॥ उभयोरपिदृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः १६ अविनाशितुतद्विद्धियेनसर्वमिदन्ततम् ॥ विनाशमव्ययस्यास्यनकश्चित्कर्त्तुमर्हति १७ अन्तवन्तइमेदेहानित्यस्योक्ताःशरीरिणः ॥ अनाशिनोऽप्रमेयस्यतस्माद्युध्यस्वभारत १८॥

असत् शीत उष्ण आदिका आत्मा में भावनहीं है औरसद्वस्तु आत्माका कभी अभावनहीं होताहै इनदोनों का निर्णय यथार्थ जाननेवाले विवेकियोंने देखाहै १६ जिससे यह सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है उसे अबिनाशी जानों क्योंकि कोई पुरुष इसनाश रहित आत्मा का बिनाश नहीं करसक्ता १७हे भारत अर्जुन आत्मानित्य सर्वदाएकरूप और अविनाशीहै और प्रमाणाविषयनहीं है उसके ये देहादि संबन्ध बिनाशी कहेगये हैं इसलिये मोहछोड़कर युद्धमें प्रवृत्तहो १८॥

यएनंवेत्तिहन्तारंयश्चैनंमन्यतेहतम् ॥ उभौ

तौनविजानीतोनायंहन्तिनहन्यते १९ नजायते म्रियतेवाकदाचिन्नायंभूत्वाभविताबानभूयः ॥ अजोनित्यःशाश्वतोऽयंपुराणो नहन्यतेहन्यमानेशरीरे २० वेदाविनाशिनंनित्यंयएनमजमव्ययम् ॥ कथंसपुरुषःपार्थकङ्घातयतिहन्तिकम् २१ ॥

जो पुरुष इस आत्माको मारने वाला और जो मार खाने वाला जानता है सोदोनों इसके जाननेके योग्य नहीं हैं क्योंकि यह आत्मा न किसी को मारताहै न किससे माराजाताहै १९ यह आत्मा न कभी उत्पन्न होता है न कभी मरताहै और मन उत्पन्न होकर वृद्धि को प्राप्तहोता है और न स्वभावसे वृद्धिको प्राप्तहोता है इसलिये अज और नित्य जिसकी उत्पत्ति नहीं और सर्वदा एक रूप और सनातनहै इसमें शरीर नष्टहोने से भी आप नहीं नष्ट होता उसे षड्भाव विकार से रहित जानो २० हे पार्थ अर्ज्जुन इस आत्माको जो पुरुष नाश और उत्पत्ति रहित और नित्य और अव्यय जानता है सो पुरुष कैसे दूसरे से घात करावेगा आप करेगा २१ ॥

वासांसिजीर्णानियथाविहाय नवानिगृह्णातिनरोऽपराणि ॥ तथाशरीराणिविहायजीर्णान्यन्यानिसंयातिनवानिदेही २२ नैनंछिन्दंतिशस्त्राणिनैनन्दहतिपावकः ॥ नचैनंक्लेदयंत्यापोनशो

षयतिमारुतः २३ अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्ले द्योऽशोष्यएवच ॥ नित्यस्सर्वगतःस्थाणुरचलो ऽयंसनातनः २४ ॥

जैसे लोकमें मनुष्य पुराने वस्त्रको त्यागकर नवीन वस्त्र पहरते हैं वैसेही देही अर्थात् आत्मा जीर्ण शरीर त्यागकर नवीन शरीर में प्राप्त होता है इसलिये जीर्ण देहादि के त्यागसे शोक करना उचित नहीं २२ ऐसे आत्माको शस्त्रादि नहीं घात करसक्के और अग्नि नहीं जलासकी और जल नहीं गलासका और वायु नहीं सुखासक्ती है २३ यह आत्मा निरअवयव होनेसे छेदन होने और गलने और सूखने के योग्य नहीं और नित्य अर्थात् त्रिकाल बाहय सर्व जगत्में व्याप्त स्थिर अचल और सनातन है २४ ॥

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्य ते ॥ तस्मादेवंविदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि २५ अथचैनंनित्यजातंनित्यंवामन्यसेमृतम् ॥ तथाऽ पित्वम्महाबाहोनैनंशोचितुमर्हसि २६ जातस्य हिध्रुवोमृत्युर्ध्रुवंजन्ममृतस्यच ॥ तस्मादपरिहार्ये ऽर्थेनत्वंशोचितुमर्हसि २७ ॥

यह आत्मा अव्यक्त अर्थात् चक्षुरादि ज्ञानेन्द्रियों से अग्राह्य और चिंताके योग्य नहीं और कर्मेन्द्रियों के अगोचरहै ऐसा तत्त्ववादी महात्रऋषि लोग कहते हैं इस

लिये इस आत्मा को ऐसा जानकर तुमको शोक करना उचित नहीं २५ हे महाबाहो अर्ज्जुन यद्यपि तुम ऐसा मानों कि यह आत्मा सर्वदा देह उत्पन्न होनेसे उत्पन्न होताहै और देह नाशहोनेसे नष्ट भी होता है तथापि इसलिये तुम शोक करने के योग्य नहीं २६ क्योंकि जो उत्पन्न भया सो निश्चय करके नाशहोता है और जो नष्टभया उसका जन्म निश्चितहै यह अनिवारण के योग्य नहीं इस कारण से तुम शोककरने के योग्य नहीं २७ ॥

अव्यक्तादीनिभूतानिव्यक्तमध्यानिभारत ॥ अव्यक्तनिधनान्येवतत्रकापरिवेदना २८ आश्चर्य्यवत्पश्यतिकश्चिदेन माश्चर्य्यवद्वदतितथैव चान्यः॥आश्चर्य्यवच्चैनमन्यःशृणोतिश्रुत्वाप्येनं वेदनचैवकश्चित् २९ देहीनित्यमबध्योऽयंदेहे सर्वस्यभारत॥तस्मात्सर्वाणिभूतानि नत्वंशोचितुमर्हसि ३० ॥

हेभारत अर्जुन प्रकृति जिस भौतिक देहोंकी आदिहै और प्रकटहोके वोस्थिति उनकी मध्यम और प्रधानही में वह लय भी होतेहैं तो इसका खेदक्या २८ कोई पुरुष इस आत्माको शास्त्र और गुरु उपदेशसे आश्चर्य्य वत् देखता है और कोई इस आत्माको आश्चर्य्यवत् कहताहै और कोई इस आत्माको बिस्मितकी नाईं

सुनता है और कोई सुनके भी इस आत्मा को नहीं जानता २९ हेभारतअर्जुन यह आत्मा सम्पूर्ण प्राणियों के देहमेंसदा अबध्य अर्थात् अबिनाशीहै इस कारणसे संपूर्णभूतों के हेतु तुम्हें शोक करना अनुचितहै ३० ॥

स्वधर्म्ममपिचावेक्ष्यनविकंपितुमर्हसि ॥ धर्म्याद्धियुद्धाच्छ्रेयोन्यत् क्षत्रियस्यनविद्यते ३१ यदृच्छयाचोपपन्नं स्वर्ग्गद्वारमपावृतम् ॥ सुखिनः क्षत्रियाःपार्थलभन्तेयुद्धमीदृशम् ३२ अथचेत्त्वमिमंधर्म्म्यं संग्रामन्नकरिष्यसि ॥ ततःस्वधर्म्मं कीर्त्तिञ्च हित्वापापमवाप्स्यसि ३३ ॥

औअपना धर्मभी देखकर तुम कांपनेके योग्य नहीं हो क्योंकि क्षत्री को धर्म्मयुद्ध से दूसरा कुछ मंगल कल्याण कारकनहीं ३१ अकस्मात्प्राप्तहुआ खुला हुआ स्वर्गका द्वार रूप ऐसे युद्धको हेअर्जुन भाग्यवान् क्षत्री प्राप्तहोते हैं ३२ अब तुम अपना बिहित धर्म संग्राम न करोगे तो अपने धर्म और कीर्त्तिको त्यागकर पापको प्राप्त होगे ३३ ॥

अकीर्त्तिञ्चापिभूतानिकथयिष्यन्तितेऽव्ययाम् ॥ सम्भावितस्यचाकीर्त्तिर्मरणादतिरिच्यते ३४ भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्तेत्वाम्महारथाः ॥ येषाञ्चत्वम्बहुमतोभूत्वायास्यसिलाघवम् ३५

अवाच्यवादांश्चबहून् वदिष्यन्तितवाहिताः ॥
निन्दन्तस्तवसामर्थ्यंततोदुःखतरन्नुकिम् ३६ ॥

लोगतुम्हारी नाश रहित अकीर्त्ति कहेंगे और प्रति॰ष्ठित लोगों को अकीर्त्ति मरणसेभी अधिक होतीहै ३४ महारथी लोग तुमको जानेंगे कि भयसे संग्राम को त्यागकिया और जिनमें तुम बहुमानी हुयेहो उनके निकट लघुता को प्राप्त होगे ३५ तुम्हारे शत्रुलोग बहुत से दुर्बचन तुम्हारी सामर्थ्य को निन्दा करते हुयेजो कहेंगे इससे अधिकतर दुःख क्या होगा ३६ ॥

हतोवाप्राप्स्यसिस्वर्गं जित्वावाभोक्ष्यसेमहीम् ॥ तस्मादुत्तिष्ठकौन्तेय युद्धायकृतनिश्चयः ३७ सुखदुःखेसमेकृत्वा लाभालाभौजयाजयौ ॥ ततोयुद्धाययुज्यस्व नैवंपापमवाप्स्यसि ३८ एषातेभिहितासांख्ये बुद्धिर्योगेत्विमांशृणु ॥ बुद्ध्यायुक्तोयययापार्थ कर्म्मबन्धम्प्रहास्यसि ३९ ॥

हेकुन्तीके पुत्र अर्जुन यदि तुममारे जावोगेतो स्वर्ग को प्राप्त होगे और जीतोगे तो राज्य भोग करोगे इस कारणसे दृढ़ निश्चय करके युद्धके लिये खड़े होजावो ३७ दुःख सुख और लाभालाभ और उनके कारणीभूत जयअजय दोनों को समकर तिनके अनन्तरयुद्ध के हेतु युक्तहो क्योंकि इस प्रकार से पाप को तुम न प्राप्त होगे ३८ उपदेश किये हुये ज्ञानयोगको समाप्त कर

कर्मयोग बतातेहैं यह सांख्य उक्तबुद्धि तुमसे कहचुके अब योगकी रीतिसे कहतेहैं सो हेपार्थ अर्जुन सुनों कि जिसबुद्धि के युक्तहोनेसे तुम कर्मबन्धको त्यागोगे ३९ ॥

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायोनविद्यते ॥ स्वल्पमप्यस्यधर्म्मस्य त्रायतेमहतोभयात् ४० व्यवसायात्मिकाबुद्धिरेकेहकुरुनन्दन ॥ बहुशाखाह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम् ४१ यामिमांपुष्पितांवाचं प्रवदंत्यविपश्चितः ॥ वेदवादरताःपार्थ नान्यदस्तीतिवादिनः ४२ ॥

इस निष्काम योगमें प्रारम्भ निष्फल नहीं और मंत्रादिके भूलचूकसे दोषनहीं इसधर्मका स्वल्प अंशभी बहुतेरे भयसे रक्षा करता है ४० हे कुरुनन्दन अर्जुन इस कर्म योगमें अर्थात् परमेश्वर आराधनमें निश्चयात्मक बुद्धि एकही होतीहै अव्यवसायी अर्थात् रागादि से लिप्त चित्तवालोंकी बुद्धिअनारूपऔर बहु शाखावती होतीहै ४१ हे पार्थ अर्जुन मोहाक्रांत अर्थात् मूर्खलोग वेदके अर्थ बादवाक्यही में प्रीति रखते हुये और काम अर्थसे अतिरिक्त दूसरे परमार्थ फल वेद बाक्यमें नहीं ऐसे कहते हुये ४२ ॥

कामात्मानःस्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम् ॥ क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्य्यगतिम्प्रति ४३ भोगैश्वर्य्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम् ॥ व्य

वसायात्मिकाबुद्धिः समाधौनविधीयते ४४ त्रैगु
ण्यविषयावेदा निस्त्रैगुण्योभवार्जुन ॥ निर्द्वन्द्वो
नित्यसत्वस्थोनिर्योगक्षेमआत्मवान् ४५ ॥

कामासक्त स्वर्गही को परम पुरुषार्थ जानने वाले
जन्मकर्म फलदायक भोग ऐश्वर्य प्राप्ति कि जिसमें
अनेक प्रकारकी क्रियाहैं उसके प्रति नानाप्रकार के अर्थ
वादोंसे बिस्तृत बाणीको कहते हैं ४३ भोग ऐश्वर्यकी
प्राप्ति से जिनका चित्त अपहृत है उन्हें निश्चयात्मक
बुद्धि ईश्वर प्राप्ति की नहीं उत्पन्न होती क्योंकि उनका
चित्तभोगादिमें सर्वदा रमता रहताहै ४४ हेअर्जुन बेद
त्रिगुणात्मक अर्थात् सकामहैं तुमइसके कामादिके
फलों की इच्छा छोड निष्कामहो निर्द्वन्द्वअर्थात् शीता-
दिके दुःख सुखको समानजानके धैर्य्यका आश्रय पकड़
योग क्षेमसे रहित होकर बुद्धिमान्हो ४५ ॥

यावानर्थउदपानेसर्वतःसंप्लुतोदके ॥तावान्
सर्वेषुवेदेषु ब्राह्मणस्यविजानतः ४६ कर्मण्ये
वाधिकारस्ते माफलेषुकदाचन ॥ माकर्मफलहेतु
र्भून्मातेसंगोस्त्वकर्मणि ४७ योगस्थःकुरुकर्मा
णि संगंत्यक्त्वाधनंजय ॥ सिद्ध्यसिद्ध्योःसमोभू
त्वासमत्वंयोगउच्यते ४८ ॥

जो अर्थ कूप बावली इत्यादिसे निकलताहै वहीम-
हानदादिसे इसलिये विवेकी ब्राह्मणको सम्पूर्ण वेदसे

जो कर्म फल प्रयोजन अर्थ निकलता है वही उसके एक देश निष्काम वाक्यसे भी निकल सक्ताहै ४६ तुम तत्त्व ज्ञानके इच्छित हो तुम्हें कर्महीं में अधिकार है भोग प्राप्ति आदिक में फलमें तुम्हारी प्रवृत्ति नहीं और कर्मफल तुम्हारा प्रवर्त्तक नहो और कर्म त्याग में तुम्हारा संग न होवै ४७ हेधनंजय अर्जुन योग अर्थात् परमेश्वर आराधन में एकाग्रचित्त हो कर्तृत्वाभिमान त्यागकर सिद्धि असिद्धिको समान जानकर कर्म करो और योग यही कहलाता है कि सिद्धि असिद्धि में समता होनी ४८ ॥

दूरेणह्यवरंकर्मबुद्धियोगाद्धनञ्जय॥बुद्धौशरण मन्विच्छकृपणाः फलहेतवः ४९ बुद्धियुक्तोज हातीहउभेसुकृतदुष्कृते ॥ तस्माद्योगाययुज्य स्वयोगःकर्म्मसुकौशलम् ५० कर्मजंबुद्धियुक्ता हिफलंत्यक्त्वामनीषिणः ॥ जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदंगच्छंत्यनामयम् ५१ ॥

हे धनंजय अर्जुन बुद्धियोग अर्थात् व्यवसायात्मक बुद्धिसे दूसरा काम्य कर्म बहुत दूरहै इसलिये बुद्धि में शरण अन्वेषण करो क्योंकि फलके सब कारण कृपण अर्थात् दीन हैं ४९ इस योगमें व्यवसायात्मक बुद्धि करके जो ईश्वराराधन करेगासो सुकृत अर्थात् स्वर्गादि भोग और दुष्कृत अर्थात् नरक भोग दोनोंको त्याग

करेगा इसलिये योगके हेतु उद्यम कर और कर्मोंमें जो कुशलता है सोई योग कहलाताहै ५० व्यवसायात्मक बुद्धि युक्त मनुष्य कर्मजन्य स्वर्गादि रूप फलत्यागकर ज्ञानी हो जन्म मरणादि से रहित हो परमेश्वर के सर्व उपद्रव रहित स्थान को प्राप्त होते हैं ५१ ॥

यदातेमोहकलिलंबुद्धिर्व्यतितरिष्यति ॥ तदागन्तासिनिर्वेदंश्रोतव्यस्यश्रुतस्यच ५२ श्रुतिविप्रतिपन्नातेयदास्थास्यतिनिश्चला ॥ समाधावचलाबुद्धिस्तदायोगमवाप्स्यसि ५३ अर्जुनउवाच ॥ स्थितप्रज्ञस्यकाभाषासमाधिस्थस्यकेशव॥ स्थितधीःकिंप्रभाषेतकिमासीतव्रजेतकिम् ५४ ॥

जिसकालमें देहआदिके कर्तृत्वाभिमानरूपसे तुम्हारी व्यवसायात्मक बुद्धि पारहोगी उस कालमें तुम सुनने के योग्य और सुनेहुये अर्थसे वैराग्य को प्राप्त होगे ५२ नाना लौकिक अर्थबोधक वेद बाक्यों से जब बुद्धि फिर कर अचल हो समाधि में स्थिरहोगी तब योग को तू प्राप्त होगा ५३ अर्जुनने प्रश्नकिया हे केशव निश्चल बुद्धिवाले जो समाधि योगमें स्थित हुये हैं उनकाक्या लक्षण है और वे क्याकहते हैं और उसका आसन और चाल चलन कैसा है ५४ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ प्रजहातियदाकामान्सर्वान्पार्थमनोगतान् ॥ आत्मन्येवात्मनातुष्टःस्थित

प्रज्ञस्तदोच्यते ५५ दुःखेष्वनुद्विग्नमनाःसुखेषु विगतस्पृहः ॥ वीतरागभयक्रोधःस्थितधीर्म्मुनि रुच्यते ५६ यःसर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्यशुभा शुभम् ॥ नाभिनन्दतिनद्वेष्टितस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठि ता ५७ ॥

भगवान् कहते हैं हे पार्थ अर्जुन जिस कालमें पुरुष मनोगत सम्पूर्ण कामों को त्याग कर अपने आत्माहीं में मनसे संतुष्ट होगा तब स्थित प्रज्ञ कहलावेगा ५५ दुःख प्राप्त होने से जिसका मनखेद में नहीं और सुखा दिमें इच्छा रहितहो रागभय और क्रोध त्यागकरे सो स्थित प्रज्ञमुनि कहलाताहै ५६ जो पुरुष सर्वत्र अर्थात् पुत्रादिसे स्नेह नहींरखता और तिस २ शुभ अथवा अशुभ बिषय को प्राप्त होके रागद्वेष नहीं करता उस पुरुषकी प्रज्ञासमाधिमें स्थिर है ५७ ॥

यदासंहरतेचायंकूर्म्मोङ्गानीवसर्वशः ॥इन्द्रि याणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता ५८ वि षयाविनिवर्त्तन्तेनिराहारस्यदेहिनः ॥ रसवर्ज्जं रसोऽप्यस्यपरन्दृष्ट्वानिवर्त्तते ५९ यततोह्यपि कौन्तेयपुरुषस्यविपश्चितः ॥ इन्द्रियाणिप्रमा थीनिहरन्तिप्रसभंमनः ६० ॥

जब योगी पुरुष इन्द्रियार्थ अर्थात् शब्दादि से

इन्द्रियों को सर्वत्र से खैंच लेता है कि जैसे कछुवा अपने अंगको समेट लेता है तब उसकी प्रज्ञा समाधि में प्रतिष्ठित होती है ५८ जो पुरुष निराहार रहता है उसकी इन्द्रियां विषयोंसे निवृत्त होती हैं परन्तु उसको रागादि की निवृत्ति नहीं होती और समाधिस्थ पुरुषको रागादि परमात्माके दर्शनसे निवृत्ति होजाते हैं ५६ हे अर्जुन बिबेकी और प्रयत्न करनेवाले के भी मनको बलात्कार अर्थात् बलसे इन्द्रियां खैंचलेती हैं क्योंकि इन्द्रीग्राम बलवान्है ६० ॥

तानिसर्वाणिसंयम्ययुक्तआसीतमत्परः ॥ वशेहियस्येन्द्रियाणितस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता ६१ ध्यायतोविषयान्पुंसःसंगस्तेषूपजायते ॥ संगात्सञ्जायतेकामःकामात्क्रोधोऽभिजायते ६२ क्रोधाद्भवतिसम्मोहःसंमोहात्स्मृतिविभ्रमः ॥ स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशोबुद्धिनाशात्प्रणश्यति ६३ ॥

इससे सब इन्द्रियों को स्वाधीन करके योगीको चाहिये कि मुझसे मन लगाये रहै क्योंकि जिस पुरुष की संपूर्ण इन्द्रियां बशमें हैं उसकी प्रज्ञा प्रतिष्ठित होती है ६१ जो पुरुष विषय सुखादि के ध्यानमें रहताहै उसे उस विषय सुखादिको अधिकता उत्पन्न होती है और उस अभिलाषासे काम और कामसे क्रोध उत्पन्न होता

है ६२ क्रोधसे युक्तायुक्त में अबिवेकता और अबिवेकता से स्मृतिभ्रम अर्थात् शास्त्र और गुरु बाक्यमें भूल और स्मृति भ्रमसे बुद्धि नष्ट होती है और नष्ट बुद्धिसे आप नष्ट होजाताहै ६३ ॥

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयाणीन्द्रियैश्चरन् ॥ आत्मवश्यैर्विधेयात्माप्रसादमधिगच्छति ६४ प्रसादेसर्वदुःखानांहानिरस्योपजायते ॥ प्रसन्न चेतसोह्याशुबुद्धिःपर्य्यवतिष्ठति ६५ नास्तिबुद्धिरयुक्तस्यनचायुक्तस्यभावना ॥ नचाभावयतः शान्तिरशान्तस्यकुतःसुखम् ६६ ॥

जो पुरुष रागद्वेष रहित हो और अपने आधीन इन्द्रियोंसे विषयको अनुभव करताहै और मन जिसका अपने बश्यहै वह पुरुष शांतिको प्राप्त होताहै ६४ प्रसाद भये पीछे उस पुरुषके सम्पूर्ण दुःखोंकी हानि होती है क्योंकि जिसका चित्त प्रसन्न भया शीघ्र उसकी बुद्धि प्रतिष्ठित होती है ६५ जिस पुरुषकी इन्द्रियां बशमें नहीं उसको शास्त्र और गुरुउपदेश की बुद्धि अर्थात् आत्म-विषयक ज्ञान नहीं और उस निर्वश इन्द्रियसे ध्यानभी नहीं होसक्ता और जो पुरुष ध्यान नहीं करसक्ता उसे चित्तकी शांति नहीं और जिसका चित्तशान्त नहीं उसे सुख अर्थात् मोक्ष आनन्द भी नहीं ६६ ॥

इन्द्रियाणांहिचरतां यन्मनोऽनुविधीयते ॥ तदस्यहरतिप्रज्ञांवायुर्नावमिवाम्भसि ६७तस्मा द्यस्यमहाबाहो निगृहीतानिसर्वशः ॥ इन्द्रिया णींद्रियार्थेभ्यस्तस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता ६८ यानि शासर्वभूतानांतस्यांजागर्त्तिसंयमी ॥ यस्यांजा ग्रतिभूतानिसानिशापश्यतोमुनेः ६९ ॥

क्योंकि विषयासक्त इन्द्रियोंके साथ जो मनभी जाताहै सोई पुरुषकी प्रज्ञाहरण करलेताहै जैसे जलमें वायु नावको खैंच लेजाती है ६७ हे महाबाहो अर्ज्जुन तिससे जिस पुरुषकी इन्द्रियां अपने २ विषयोंसे आकर्षित होती हैं उस पुरुषकी प्रज्ञाप्रतिष्ठित कहलाती है ६८ अज्ञानरूप अन्धकार से जिनकी बुद्धि आच्छादित है उनकी रात्रिमें जितेन्द्रिय योगी जागतेहैं और जिस विषयादि रूप निशामें सम्पूर्ण भूत जागतेहैं सो आत्मा तत्त्वदर्शी मुनियों की रात्रि है ६९ ॥

आपूर्य्यमाणमचलप्रतिष्ठंसमुद्रमापःप्रविशं तियद्वत् ॥ तद्वत्कामायंप्रविशंतिसर्वेसशान्तिमा प्नोतिनकामकामी ७० विहायकामान्यःसर्वान् पुमांश्चरतिनिस्पृहः ॥ निर्ममोनिरहंकारस्सशा न्तिमधिगच्छति ७१ एषाब्राह्मीस्थितिःपार्थनै

नांप्राप्यविमुह्यति ॥ स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि
ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ७२ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्र संहितायां वैया
सिक्यांभीष्मपर्वणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनि
षत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जुन
सम्बादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयो
ऽध्यायः २॥

जैसे सब ओरसे भरेहुये समुद्रमें जल आनिके प्रवेश करते हैं पर वह अपनी प्रतिष्ठासे नहीं चलायमान होता वैसेही जिस पुरुष में सम्पूर्ण विषय प्रविष्ट होते हैं और मनमें कुछ विकार नहीं होता सो पुरुष मोक्षको प्राप्त होगा और विषयोंकी इच्छावाला पुरुष नहीं ७० जो पुरुष सम्पूर्ण कामोंको त्यागकर निस्पृहहो व्यवहार करताहै और ममता और अहंकार से रहित सो पुरुष शान्तिको प्राप्तहोताहै ७१ हे पार्थ अर्ज्जुन यह ब्रह्मज्ञान की निष्ठा है इस निष्ठाको जो मरणकालमें भी प्राप्त होगा उसे संसारीमोह न होगा और जो पुरुष पहिले से मरण समयतक इसका अभ्यास करेगा सो मोक्ष पदको प्राप्तहोगा यह क्या कहनाहै ७२ ॥

सांख्ययोगनिरूपणदूसराअध्यायसमाप्तहुआ २ ॥

अर्जुनउवाच ॥ ज्यायसीचेत्कर्म्मणस्तेमता बुद्धिर्जनार्दन ॥ तत्किंकर्मणिघोरेमांनियोजयसि केशव १व्यामिश्रेणैववाक्येनबुद्धिंमोहयसीवमे ॥ तदेकवदनिश्चित्ययेनश्रेयोहमाप्नुयाम् २ श्रीभगवानुवाच ॥ लोकेऽस्मिन्द्विविधानिष्ठापुराप्रोक्तामयानघ ॥ ज्ञानसांख्येनयोगानांकर्मयोगेन योगिनाम् ३ ॥

अर्जुन प्रश्न करते हैं कि हे जनार्दन श्रीकृष्ण यदिकर्म से बुद्धिश्रेष्ठहै तो हे केशव मुझको क्यों कर्म में प्रवृत्त करते हो १ कर्म और बुद्धि मिश्रित वाक्यसे मेरीबुद्धि को मोहतेहो इसलिये दोनोंमें से एकको निश्चय करके कहो कि जिससे मैं कल्याणको प्राप्तहूं २ भगवान् उत्तर देतेहैं हे अनघ अर्थात् कल्मषरहित अर्ज्जुन इन अधिकारी जनोंके हेतु पूर्व अध्यायमें मैंने दोप्रकारकी निष्ठा कही सांख्यवाले को ज्ञानयोग और योगतम वाले को कर्म योग वर्णन किया ३ ॥

नकर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यंपुरुषोऽश्नुते॥नच संन्यसनादेवसिद्धिंसमधिगच्छति ४ नहिकश्चित्क्षणमपिजातुतिष्ठत्यकर्मकृत् ॥ कार्यतेह्यवशःकर्मसर्वंप्रकृतिजैर्गुणैः ५ कर्मेन्द्रियाणिसंयम्य

यश्चास्तेमनसास्मरन् ॥ इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारःसउच्यते ६ ॥

बिना कर्म के आरम्भ पुरुष ज्ञानको नहीं प्राप्तहोता वैसेही बिना कर्म संन्यास ग्रहण कियेसेभी मोक्षको नहीं प्राप्तहोता ४ कोई पुरुष किसी अवस्थामें विना कर्म किये क्षणभर भी नहीं ठहर सक्ता क्योंकि सम्पूर्णजन प्रकृतिजन्य स्वाभाविक रागादि गुणोंसे परबशहो कर्म में प्रवृत्तभये जाते हैं ५ जो पुरुष कर्मेन्द्रियोंको रोक मन से विषयों का स्मरण करता रहताहै सो मूढात्मा और कपटीचार कहलाताहै ६ ॥

यस्त्विन्द्रियाणिमनसानियम्यारभतेर्जुन ॥ कर्मेन्द्रियैःकर्मयोगमसक्तःसविशिष्यते ७ नियतंकुरुकर्मत्वंकर्मज्यायोह्यकर्मणः ॥ शरीरयात्रापिचतेनप्रसिद्धेदकर्मणः ८ यज्ञार्थात्कर्मणोन्यत्र लोकोयंकर्मबन्धनः ॥ तदर्थंकर्म्मकौंतेयमुक्तसंगःसमाचर ९ ॥

हे अर्जुन जो पुरुष ज्ञानेन्द्रियोंको मनके साथ रोक कर कर्मेन्द्रियोंसे कर्म्म फलकी आशा छोड़कर कर्म्म योग आरम्भ करताहै सो ज्ञानवान् है ७ तुम नित्य वर्णाश्रम कर्म्मकरो क्योंकि अकर्म्मसे कर्म्मश्रेष्ठहै यदि तुम कर्म्म न करोगे तो शरीरान्तमें गति भी सिद्धि न होगी ८ ईश्वर निमित्त कर्म्ममें अतिरिक्त कर्म्म इस

लोक के लिये बन्धनहै इसलिये हे अर्जुन मुक्तसंग हो अर्थात् विषय इच्छा रहित होकर कर्म्म करो ९ ॥

सहयज्ञाःप्रजासृष्ट्वा पुरोवाचप्रजापतिः ॥ अनेनप्रसविष्यध्वमेषवोऽस्त्विष्टकामधुक् १० देवान्भावयतानेनतेदेवाभावयन्तुवः ॥ परस्परंभावयन्तःश्रेयःपरमवाप्स्यथ ११ इष्टान्भोगान्हिवोदेवादास्यन्तेयज्ञभाविताः ॥ तैर्दत्तानप्रदायैभ्योयोभुंक्तेस्तेनएवसः १२ ॥

स्वर्ग आदिमें प्रजापति ब्रह्माने यज्ञकरनेवाले ब्राह्मणादिप्रजाको उत्पन्नकरके कहते भये कि इसयज्ञसे तुम लोग उत्पत्तिकरो यही यज्ञ तुम लोगों को सम्पूर्ण इष्ट का देनेवालाहै १० इस यज्ञकरके देवतोंकीहवि भोगादि से पूजाकरो और देवता लोग वृष्टि आदि से तुम्हारी पालना करेंगे इस परस्पर भावनासे तुमलोग उत्तम मंगल को प्राप्तहोगे ११ यज्ञकरके पूजित देवता लोग तुम लोगों को सम्पूर्ण भोगादि देंगे उन देवतोंसे जो अन्न मिलाहै उसे पंच यज्ञादि से दूसरे को न देकर जो भोजन करेगा सो चोरहै १२ ॥

यज्ञशिष्टाशिनःसन्तोमुच्यन्तेसर्वकिल्विषैः॥ भुंजतेतेत्वघंपापा येपचन्त्यात्मकारणात् १३ अन्नाद्भवन्तिभूतानिपर्जन्यादन्नसम्भवः ॥ यज्ञा

द्भवतिपर्जन्योयज्ञःकर्मसमुद्भवः १४ कर्मब्रह्मोद्भवंविद्धिब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ॥ तस्मात्सर्वगतंब्रह्म नित्यंयज्ञेप्रतिष्ठितम् १५ ॥

बैश्वदेवादि यज्ञसे बचाहुआ शेष जो लोग भोजन करतेहैं वे सम्पूर्ण पापसे मुक्तहोतेहैं और जो दुराचार अपने पेटकेहेतु पाप करतेहैं सो पापही भोगकरेंगे १३ अन्नसे सम्पूर्ण भूत उत्पन्न होतें हैं और अन्न वृष्टिसे और वृष्टि यज्ञसे होतीहै और यज्ञ कर्म्म से होताहै १४ कर्म्म वेदसे उत्पन्न भया और वेद अक्षर रूप परब्रह्म से इसलिये उससर्बगत ब्रह्मको सर्बदा यज्ञमें प्रतिष्ठित जानो १५ ॥

एवंप्रवर्तितंचक्रंनानुवर्तयतीहयः ॥ अघायुरिन्द्रियारामोमोघंपार्थसजीवति १६ यस्त्वात्मरतिरेवस्यादात्मतृप्तश्चमानवः ॥ आत्मन्येवच संतुष्टस्तस्यकार्य्यंनविद्यते १७ नैवतस्यकृते नार्थोनाकृतेनेहकश्चन ॥ नचास्यसर्वभूतेषुकश्चिदर्थव्यपाश्रयः १८ ॥

हे पार्थ अर्ज्जुन पूर्वोक्त चक्र इसप्रकारसे मैंने प्रवृत्त कियाहै जो पुरुष इसलोक में उसके अनुसार नहीं चलता सो पापजीवी और विषयासक्त है और जीवन उसका व्यर्थहै १६ जो पुरुष आत्माहीसे प्रीति रखता है आत्माही में अर्थात् ब्रह्मानंद से तृप्त भी रहता और

आत्माही में भोगादि से अपेक्षा रहित हो संतुष्टहोता है उस पुरुष के लिये कुछ कार्य्य अवशेष नहीं १७ ऐसे पुरुष को न कुछ पुण्य करने से अर्थहै न पापसे और उसको सम्पूर्ण भूतोंसे किसी अर्थ का बियोग भी नहीं १८ ॥

तस्मादसक्तःसततं कार्य्यंकर्म्मसमाचर ॥ असक्तोह्याचरन्कर्म्म परमाप्नोतिपूरुषः १९ कर्म्मणैवहिसंसिद्धिमास्थिताजनकादयः ॥ लोकसंग्रहमेवापिसम्पश्यन्कर्तुमर्हसि २० यद्यदाचरतिश्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः ॥ सयत्प्रमाणंकुरुतेलोकस्तदनुवर्तते २१ ॥

इस लिये फलकी इच्छा से रहित हो सर्बदा तुम योग कर्ममें प्रवृत्त हो क्योंकि भोगादिसे इच्छारहित होकर जो पुरुष कर्म करता है सो मोक्षको प्राप्तहोता है १९ जनकादिक ज्ञानी लोग कर्महीकरनेसे मोक्षको प्राप्त भये और तुमअच्छी भांतिसे देखकर लोक संग्रह के हेतु भी कर्म करने के योग्य हो २० क्योंकि उत्तम लोग जो जो कर्माचरण करतेहैं इतरलोगभी उसीका आचरण करतेहैं और उत्तम लोगजिसका प्रमाण मानतेहैं संसारी लोग भी उसीकेअनुसार चलतेहैं २१ ॥

नमेपार्थास्तिकर्तव्यं त्रिषुलोकेषुकिञ्चन ॥ नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त्तएवचकर्म्मणि २२ यदि

ह्यहंनवर्त्तेयं जातुकर्म्मण्यतन्द्रितः ॥ ममवर्त्मा नुवर्त्तन्ते मनुष्याःपार्थसर्वशः २३ उत्सीदेयुरि मेलोकानकुर्यांकर्म्मचेदहम् ॥ संकरस्यचकर्त्ता स्यामुपहन्यामिमाःप्रजाः २४ ॥

हे पार्थ अर्ज्जुन मुझको तीनों लोकमें किंचित् कुछ कर्तव्य नहीं है और न कोई अप्राप्त वस्तु कर्मसे प्राप्त करनेके योग्यहै तिसपर भी मैं कर्ममें प्रवृत्तहीहौं २२ यदिहम कदाचित् आलस्य रहितहोकर कर्ममें प्रवृत्त न होंतो हे पार्थ अर्ज्जुन सम्पूर्ण मनुष्य हमारेही मार्ग के अनुसार हो कर्म त्याग करेंगे २३ यह लोग कर्म लोप होने से नष्ट होजायँगे यदि हम कर्म न करें और वर्णसङ्कर के कर्त्ता हमीं होंतो इससे इन प्रजाओं को नष्ट करेंगे २४ ॥

सक्ताःकर्मण्यविद्वांसो यथाकुर्वन्तिभारत ॥ कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् २५ न बुद्धिभेदंजनयेदज्ञानांकर्मसंङ्गिनाम् ॥ जोषयेत्स र्वकर्माणिविद्वान्युक्तःसमाचरन् २६ प्रकृतेःक्रिय माणानिगुणैःकर्माणिसर्वशः ॥ अहंकारविमूढा त्माकर्त्ताहमितिमन्यते २७ ॥

हे पार्थ अर्ज्जुन जैसे मूर्खलोग कर्म करनेकी इच्छा से प्रवृत्त होकर कर्म करतेहैं वैसेही पण्डितलोग उसे

असक्त होकर लोक संग्रह के हेतु कर्म करें २५ कर्मा-सक्त मूर्खों को बुद्धिका भेद न जानना चाहिये बिबेकी लोगों को उचितहै कि आप कर्म करके उनसे सम्पूर्ण कर्म करावैं २६ प्रकृतिके गुण इन्द्रियादि करके सम्पूर्ण क्रियमाण कर्मोंको मूढलोग जिनकी बुद्धि अहङ्कार से मोहितहै वे जानते हैं कि हम करनेवाले हैं २७॥

तत्त्ववित्तुमहाबाहोगुणकर्मविभागयोः॥ गुणा गुणेषुवर्तन्तइतिमत्वानसज्जते २८ प्रकृतेर्गुण सम्मूढासज्जन्तेगुणकर्मसु ॥ तानकृत्स्नविदोमं दान्कृत्स्नविन्नविचालयेत् २९ मयिसर्वाणिकर्मा णिसंन्यस्याध्यात्मचेतसा ॥ निराशीर्निर्ममोभू त्वायुध्यस्वविगतज्वरः ३० ॥

हे महाबाहो अर्जुन विवेकी पुरुष अपने को इन्द्रि-यादि और कर्मों से अलग जानकर अपने में अहंकार नहीं आरोप करते क्योंकि वह जानता है कि इन्द्रियां अपने २ विषय में आपही सर्वदा प्रवृत्त हैं २८ प्रकृति के सत्त्वादि तीनों गुणोंसे मूर्खलोग मोहितहो इन्द्रिय और देहेन्द्रिय के व्यापार में अभिमान में प्रवृत्त हैं इस-लिये विवेकियों को उचित है कि बुद्धिभेद में उन्हें न प्रवृत्त करें २९ सम्पूर्ण कर्मोंका मुझी में ईश्वराधीन बुद्धिसे समर्पण करके कर्मफल से आशा और ममता रहितहो शोकको छोड़ युद्धकरो ३० ॥

येमेमतमिदंनित्यमनुतिष्ठंतिमानवाः ॥ श्रद्धावन्तोनसूयन्तोमुच्यंतेतेपिकर्मभिः ३१ येत्वेतदभ्यसूयन्तोनानुतिष्ठंतिमेमतम् ॥ सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धिनष्टानचेतसः ३२ सदृशंचेष्टतेस्वस्याःप्रकृतेर्ज्ञानवानपि ॥ प्रकृतिंयान्तिभूतानिनिग्रहःकिंकरिष्यति ३३ ॥

जो मनुष्य मेरे इसमतके अनुसार श्रद्धापूर्वक और निन्दा रहित होकर चलते हैं वे लोग ज्ञानीकी नाईं कर्म बन्धसे मुक्त होते हैं ३१ जो लोग इस मेरे मतकी निन्दा करते हैं और इसके अनुसार नहीं चलते उन्हें जानो कि वे सम्पूर्ण ज्ञानसे रहित और मृतक के तुल्य और विवेक रहित हैं ३२ ज्ञानी लोग भी अपने पुरातन कर्माधीन स्वभावही के अनुसार चलेजाते हैं और सब प्राणीभी उसीस्वभावके अनुसार चलेजाते हैं क्योंकि प्रकृति सबसे बलवती है वहां इन्द्रिय रोकने से क्या होगा ३३ ॥

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थेरागद्वेषौव्यवस्थितौ ॥ तयोर्नवशमागच्छेत्तौह्यस्यपरिपंथिनौ ३४ श्रेयान्स्वधर्मोविगुणःपरधर्मात्स्वनुष्ठितात् ॥ स्वधर्मेनिधनंश्रेयःपरधर्मोभयावहः ३५ ॥ अर्जुनउवा

च ॥ अथकेनप्रयुक्तोऽयंपापंचरतिपूरुषः ॥ अनिच्छन्नपिवार्ष्णेयबलादिवनियोजितः ३६ ॥

प्रति इन्द्रियों में उनके विषय अनुकूलता से राग और प्रतिकूलतासे द्वेष दोनों अवश्य रहते हैं इसलिये इन दोनोंके वश न होना चाहिये क्योंकि ये निश्चित पुरुष के शत्रु हैं ३४ अपना धर्म यद्यपि न्यून भी हो तो पर धर्मसे शुभ है कि जिसका अच्छी भांतिसे आचरण कियागया है क्योंकि अपने धर्मसे मरना भलाहै भयानक परधर्म से ३५ अर्जुन प्रश्न करते हैं हे वार्ष्णेय यदुपति जो पुरुष कामादिसे अनिच्छित है उसे किसने नियुक्त पुरुषकी नाईं पापमें प्रवृत्त किया है ३६ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ कामएषक्रोधएषरजोगुणसमुद्भवः ॥ महाशनोमहापाप्माविद्ध्येनमिहवैरिणम् ३७ धूमेनाव्रियतेवह्निर्यथादर्शोमलेनच ॥ यथोल्वेनावृतोगर्भस्तथातेनेदमावृतम् ३८ आवृतंज्ञानमेतेनज्ञानिनोनित्यवैरिणा ॥ कामरूपेणकौन्तेयदुष्पूरेणानलेनच ३९ ॥

श्रीकृष्णचन्द्र उत्तरदेते हैं जिसको तुम पूँछतेहो सो काम और क्रोध हैं और राजसगुण करके उत्पन्न होते महाभक्षक और पापी हैं इस मोक्षमार्ग में इन्हें शत्रु करजानो ३७ जैसे धुवां से आग और मलसे दर्पण और उल्व अर्थात् गर्भ वेष्टन चर्म से गर्भ घेरा है

वैसेही काम और क्रोध से सम्पूर्ण जगत् घेराहुआ है ३८ हे अर्जुन इस नित्य बैरी का मन ज्ञानियों का ज्ञान घेर रक्खा है और यह सर्वदा आग की नाईं अतृप्त है ३९ ॥

इन्द्रियाणिमनोबुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ॥ एतैर्विमोहयत्येषज्ञानमावृत्यदेहिनम् ४० तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौनियम्यभरतर्षभ ॥ पाप्मानंप्रजह्येनंज्ञानविज्ञाननाशनम् ४१ इन्द्रियाणिपराण्याहुरिन्द्रियेभ्यःपरम्मनः ॥ मनसस्तुपराबुद्धिर्योबुद्धेःपरतस्तुसः ४२ ॥

सम्पूर्ण इन्द्रियां मन बुद्धि आदि इस कामके स्थान कहलाते हैं वह इन इन्द्रियों से ज्ञान से घेरकर देही अर्थात् आत्मा को मोहलेताहै ४० हे अर्जुन इसलिये तुम मोह प्राप्तहोने से पहिले सम्पूर्ण इन्द्रियोंको रोककर इस पापी कामको जीतो क्योंकि यह शास्त्र और गुरूपदेश ज्ञान और विज्ञान अर्थात् तत्त्वज्ञान इनदोनों का नाशकहै ४१ कहतेहैं कि दोनों इन्द्रियां देहादिसे श्रेष्ठ और इन्द्रियोंसे श्रेष्ठमन और मनसे श्रेष्ठनिश्चयात्मक बुद्धिहै और जो बुद्धिसे भीपरे है वही परमेश्वरहै ४२॥

एवंबुद्धेःपरंबुध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मनाः ॥

जहिशत्रुंमहाबाहोकामरूपंदुरासदम् ४३ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्रसंहितायांवैयासिक्यांभीष्मपर्व्वणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसम्वादे कर्मयोगोनामतृतीयोऽध्यायः ३

हे महाबाहो अर्जुन वृद्धिमकासाक्षी ईश्वरको जान कर संशयात्मक मनको निश्चयात्मक बुद्धिसे रोककर अजित कामरूपी शत्रुको पराजयकरो ४३ ॥

कर्म्म योग प्रतिपादक तीसरा अध्याय समाप्तहुआ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ इमंविवस्वतेयोगंप्रोक्तवानहमव्ययम् ॥ विवस्वान्मनवेप्राहमनुरिक्ष्वाकवेब्रवीत् १ एवंपरंपराप्राप्तमिमंराजर्षयोविदुः ॥ सकालेनेहमहतायोगोनष्टःपरंतप २ सएवायंमयातेद्ययोगःप्रोक्तःपुरातनः ॥भक्तोसिमेसखाचेति रहस्यंह्येतदुत्तमम् ३ ॥

श्रीभगवान् कहते हैं कि यह अविनाशीयोग पहिले हमने सूर्य्य से कहा और सूर्य्यने मनुसे फिर मनुने अपने पुत्र इक्ष्वाकु राजा से निरूपण किया १ हे परन्तप अर्जुन इसीप्रकारसे यह परम्परायोग चलाआता

है राजऋषी और राजालोग जानतेरहे सो योग बहुत कालसे मृतप्राय होरहाहै २ जो हमने तुमसे कहा सो वही पुरातन योगहै अति गोपनीय और उत्तमहै तुम मेरे भक्त और सखा भी हौ इसलिये तुमसे निरूपण किया ३ ॥

अर्जुनउवाच ॥ अपरंभवतोजन्मपरंजन्मविवस्वतः ॥ कथमेतद्विजानीयांत्वमादौप्रोक्तवानिति ४ श्रीभगवानुवाच ॥ बहूनिमेव्यतीतानिजन्मानितवचार्जुन ॥ तान्यहंवेदसर्वाणिनत्वंवेत्थपरन्तप ५ अजोऽपिसन्नव्ययात्माभूतानामीश्वरोऽपिसन् ॥ प्रकृतिस्वामधिष्ठायसम्भवाम्यात्ममायया ६ ॥

अर्जुन प्रश्न करते हैं कि तुम्हारा जन्म पीछेहै और सूर्य्यका जन्म तुमसे पहिले तो तुमने पहिले सूर्य्य से यह योग क्योंकर कहा यह मुझे बतावो ४ श्रीभगवान् उत्तरदेते हैं कि हे अर्जुन मेरे और तुम्हारे बहुतसे जन्म व्यतीत भये हैं सो मैं जानताहूं और तुम नहीं जानते ५ हम उत्पत्ति रहित अविनाशी और सम्पूर्ण भूतोंके ईश्वर हैं तथापि हम अपनी शुद्ध सात्विक प्रकृतिको स्वीकार करके अपनी मायासे उत्पन्न होते हैं ६ ॥

यदायदाहिधर्मस्यग्लानिर्भवतिभारत ॥ अ

भ्युत्थानमधर्मस्यतदात्मानंसृजाम्यहम् ७ परित्राणायसाधूनांविनाशायचदुःकृताम् ॥ धर्मसंस्थापनार्थायसम्भवामियुगेयुगे ८ जन्मकर्मचमेदिव्यमेवंयोवेत्तितत्त्वतः ॥ त्यक्त्वादेहंपुनर्जन्मनैतिमामेतिसोर्जुन ९ ॥

हे अर्जुन जब २ धर्म्मकीहानि और अधर्म्मकीवृद्धि होती है तब २ मैं अवतार लेताहूं ७ सम्पूर्ण साधुओं के रक्षण के हेतु और दुष्टों के नाश करने और धर्म्म स्थापन करनेके लिये सब युगों में जन्म लेताहूं ८ हे अर्जुन इसप्रकार से जो मेरा उत्कृष्ट जन्म और कर्म यथार्थ करके जानता है सो देह त्यागकर जन्म नहीं पाता और मुझमें प्राप्तहोता है ९ ॥

वीतरागभयक्रोधामन्मयामामुपाश्रिताः ॥ बहवोज्ञानतपसापूतामद्भावमागताः १० येयथामांप्रपद्यन्तेतांतथैवभजाम्यहम् ॥ ममवर्त्मानुवर्तन्तेमनुष्याःपार्थसर्वशः ११ कांक्षतःकर्मणांसिद्धिंयजन्तइहदेवताः ॥ क्षिप्रंहिमानुषेलोकेमासिद्धिर्भवतिकर्मजा १२ ॥

बहुत से लोग राग भय और क्रोधसे रहित होकर मुझमें चित्तलगाकर मेरे शरणआकर और ज्ञानरूपतप करके पवित्रहो मेरेही भावको प्राप्तभये हैं १० हेअर्जुन

जो लोग जैसे अर्थात् सकाम या निष्काम मेरेशरणागतहोते हैं उनको उसीके अनुसार फल देकर उनकी रक्षा करताहूँ क्योंकि सब मनुष्य मेरेही मार्गके अनुसार चलतेहैं ११ जो इस लोक में फलकी इच्छा से देवतों की आराधना करते हैं उन्हें कर्म्म फलकीसिद्धि मर्त्यलोक में शीघ्र होती है १२॥

चातुर्वर्ण्यंम्मयासृष्टंगुणकर्मविभागशः॥ तस्यकर्तारमपिमांविद्ध्यकर्तारमव्ययं १३ नमांकर्माणिलिंपन्तिनमेकर्मफलेस्पृहा॥ इतिमांयोऽभिजानातिकर्मभिर्नसबध्यते १४ एवंज्ञात्वाकृतंकर्मपूर्वैरपिमुमुक्षुभिः॥ कुरुकर्मैवतस्मात्त्वंपूर्वैःपूर्वतरंकृतम् १५॥

चारोंबर्ण की सृष्टि उनके सात्विकादि गुण और कर्म्म भेद से मैंने कीहै इस हेतुसे सृष्टिका मैं कर्त्ताहूं और मैं अबिनाशी फलकी अपेक्षा से रहितहूं इससे मुझे अकर्त्ता भी जानो १३ सम्पूर्ण कर्म्म मुझको आसक्त नहीं करसक्ते क्योंकि मुझे कर्म्म फल की इच्छा नहीं ऐसा जो पुरुष मुझको जानता है सो कर्मोंकरके बद्ध नहीं होता १४ पुरातन जनकादि मुमुक्षु अर्थात् मोक्षकी इच्छावाले पुरुषोंने ऐसाजानकर सत्त्वशुद्धिके हेतु कर्म्म कियाहै और युगान्तर में भी प्राचीनलोगों ने कर्म्म किये हैं इसलिये तुमभी कर्म्ममें प्रवृत्तहो ॥ १५

किंकर्मकिमकर्मेति कवयोप्यत्रमोहिताः ॥ तत्तेकर्मप्रवक्ष्यामियद्ज्ञात्वामोक्ष्यसेऽशुभात् १६ कर्मणोह्यपिबोधव्यंबोधव्यंचविकर्मणः ॥ अकर्मणश्चबोद्धव्यगहनाकर्मणोगतिः १७ कर्मण्यकर्मयःपश्येदकर्मणिचकर्मयः ॥ सबुद्धिमान्मनुष्येषुसयुक्तःकृत्स्नकर्मकृत् १८ ॥

कौन कर्म करने के योग्यहै और कौन नहीं इसमें विवेकी लोगभी मोहको प्राप्तहोतेहैं सो मैं तुमसेकहताहूं जिसके जाननेसे अशुभ अर्थात् संसारसे मुक्तहो जावेंगे १६ शास्त्रबिहित कर्म्म और निषिद्ध कर्म्म और त्याग योग्य कर्मोंकोभी जानना चाहिये क्योंकि कर्म्म गति कष्टसे भी जानने के योग्य नहीं १७ जो पुरुष बिहित कर्मोंमें से जानताहै कि यह कर्म्म करने के योग्य नहीं और अन्य कर्मों में से जानताहै कि यह करने के योग्यहै क्योंकि उसे लौकिक रागादि फलकी अपेक्षा नहीं सो पुरुष सम्पूर्ण कर्म्मकरनेवाले मनुष्यों में से पण्डितहै इसलिये कि सब कर्म्म कर्ताहै १८ ॥

यस्यसर्वेसमारम्भाःकामसंकल्पवर्जिताः॥ज्ञानाग्निदग्धकर्माणंतमाहुःपंडितंबुधाः १९ त्यक्त्वा कर्मफलासंगंनित्यतृप्तोनिराश्रयः ॥ कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपिनैवकिंचित्करोतिसः २० निराशीर्यत

चित्तात्मात्यक्तसर्वपरिग्रहः ॥ शारीरंकेवलंकर्मकु
र्वन्नाप्नोतिकिल्विषम् २१ ॥

जिस पुरुषके सम्पूर्ण कर्म्म काम और सङ्कल्पसे रहित हैं और जिसने ज्ञानरूपी अग्निमें सब कर्मोंको दग्ध करदिये उसे विवेकी लोग पण्डित कहतेहैं १९ जो पुरुष कर्म्म फलकी इच्छा छोड़ नित्यानन्दसे तृप्त और निराश्रय रहताहै यद्यपि कर्मोंमें प्रवृत्तहो तथापि कुछ भी नहीं कर्त्ता २० जो पुरुष कामनादि से रहित हो चित्त और शरीरको स्वाधीनकर सर्व परिग्रह को त्यागकरताहै सो केवल शरीर रक्षणहेतु कर्म्म करनेसे क्लेश को नहीं प्राप्त होता २१ ॥

यदृच्छालाभसंतुष्टोद्वन्द्वातीतोविमत्सरः ॥ स
मःसिद्धावसिद्धौचकृत्वापिनानिबध्यते २२ गतसं
गस्यमुक्तस्यज्ञानावस्थितचेतसः ॥यज्ञायाचरतः
कर्म्मसमग्रंप्रविलीयते २३ ब्रह्मार्पणंब्रह्महवि
र्ब्रह्माग्नौब्रह्मणाहुतम् ॥ ब्रह्मैवतेनगन्तव्यंब्रह्म
कर्मसमाधिना २४ ॥

जो पुरुष बिना जांचेहुये लोभसे संतुष्ट रहता और शीतोष्णादि दुःखों को समानजानता और सम्पूर्णभूतों से निर्बैर रहता और हर्ष बिषादको सम देखताहै सो कर्म्मसे बन्धको नहीं प्राप्त होता २२ जो पुरुष संग अर्थात् रागादिसे रहित और मुक्तहै और ज्ञानमें उसका

चित्त स्थिर रहता और ईश्वराराधन के हेतु कर्म्म करता है सो बासना सहित सम्पूर्ण कर्मोंसे मुक्तहोजा- ता है २३ जो पुरुष होम के पात्र और द्रव्य घृतादि अग्नि हवनकर्ता और क्रिया सम्पूर्ण वस्तुको ब्रह्महो जानताहै उसको ब्रह्मसे अतिरिक्त अन्य वस्तु प्राप्त करने के योग्य नहीं २४ ॥

दैवमेवापरेयज्ञंयोगिनःपर्युपासते ॥ ब्रह्माग्ना वपरेयज्ञंयज्ञेनैवोपिजुह्वति २५ श्रोत्रादीनिन्द्रि याण्यन्येशंयमाग्निषुजुह्वति ॥ शब्दादीन्विष यानन्येइन्द्रियाग्निषुजुह्वति २६ सर्वाणीन्द्रिय कर्माणिप्राणकर्माणिचापरे ॥ आत्मसंयमयोगा ग्नौजुह्वतिज्ञानदीपिते २७ ॥

कर्म्म योग करनेवाले देवतादिक के हेतु हवनादि उपासना करतेहैं और ज्ञान योग करने वाले ज्ञान की अग्निमें हवनादि कर्म्म ब्रह्मार्पण बुद्धिसे लय करते हैं २५ और नैष्ठिक ब्रह्मचारी पुरुष श्रोत्रादि ज्ञानेन्द्रियों को संयमरूपी अग्निमें लयकरते हैं और गृहस्थाश्रमी शब्दादि बिषयोंको इन्द्रियादि अग्निमें लयकरतेहैं २६ ध्यानावस्थित लोग सम्पूर्ण इन्द्रियों के व्यवहारको अपने २ ग्राहक इन्द्रियोंमें अर्पणकरके मनसंयम अर्थात् मनकी एकाग्रता रूपी अग्निमें जो ज्ञानसे प्रकाशितहै उसमें लयकरतेहैं २७ ॥

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञायोगयज्ञास्तथापरे ॥स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्चयतयःसंसितव्रताः २८अपाने जुह्वतिप्राणंप्राणोपानंतथापरे ॥ प्राणापानगती रुद्ध्वाप्राणायामपरायणाः २९ अपरेनियताहाराःप्राणान्प्राणेषुजुह्वति ॥ सर्वेप्येतेयज्ञविदोयज्ञक्षपितकल्मषाः ३० ॥

कोई तो द्रव्य से यज्ञ करता है कोई तपसे कोई योगाभ्याससे यज्ञ अर्थात् आराधनकरता है कोई वेदाध्ययन और मनरूपी यज्ञसे और कोई ज्ञान यज्ञसे परन्तु यतीलोग अपने स्वभावसे निश्चित हो उपासना करते हैं २८ कोई अपानमें प्राण पूरक मार्ग से लय करता है कोई प्राणके अपान कोरेचक मार्ग से योंहीं कोई प्राण और अपान की गति कुंभक से रोकके प्राणायाम शीलहोतेहैं २९ कोई आहार घटाने से इन्द्रियों के व्यापारको उनकी इन्द्रियों में होमकरता है ऐसे ये सब यज्ञ जानने वाले यज्ञकर क्लेश रहित होतेहैं ३०॥

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्तिब्रह्मसनातनम् ॥ नायंलोकोऽस्त्ययज्ञस्यकुतोऽन्यःकुरुसत्तम ३१ एवंबहुविधायज्ञावितताब्रह्मणोमुखे ॥ कर्मजां विद्धितान्सर्वानेवंज्ञात्वाविमोक्ष्यसे ३२ श्रेयान्द्र

व्यमयाद्यज्ञाद्दानयज्ञःपरन्तप ॥ सर्वंकर्माखिलं पार्थज्ञानेपरिसमाप्यते ३३ ॥

हे अर्ज्जुन यज्ञ समाप्त करके अवशिष्ट कालमें जो अमृत संज्ञित अन्नको भक्षण करताहै सो सनातनब्रह्म को प्राप्त होताहै और जो यज्ञनहीं करता उसे मर्त्य-लोकही नहीं प्राप्त होता परलोक कबमिलेगा ३१ वेदमें बिस्तार से अनेक प्रकारके यज्ञ इस प्रकारसेकहे हैं वे सम्पूर्ण यज्ञ मनबाचा और कर्मसे जनित जानो क्योंकि परमेश्वर के बल ज्ञानमात्र गोचर हैं औरयज्ञ चित्त शुद्धिद्वारा ज्ञान उपयोगी यज्ञ जानकर संसार से मुक्त हो ३२ हे अर्जुन द्रव्यमय यज्ञ से ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठ है क्योंकि संपूर्ण कर्मफल सहित ज्ञानही में समाप्त होते हैं ३३ ॥

तद्विद्धिप्रणिपातेनपरिप्रश्नेनसेवया ॥ उपदेक्ष्यन्तितेज्ञानंज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः३४ यज्ज्ञात्वा नपुनर्मोहमेवंयास्यासिपाण्डव ॥ येनभूतान्यशेषेणद्रक्ष्यस्यात्मन्यथोमयि ३५ अपिचेदसिपापेभ्यस्सर्वेभ्यःपापकृत्तमः ॥ सर्वंज्ञानप्लवेनैववृजिनंसन्तरिष्यसि ३६ ॥

दण्डवत प्रश्न और सेवा करके उस ज्ञानको प्राप्त होतो वे ज्ञानी लोग तुमको उपदेश करेंगे क्योंकि वे सर्वदा तत्त्वहीके विचारमें रहतेहैं ३४ हे पाण्डव अर्जुन

जिस ज्ञानको यों जानकर बन्ध निमित्त मोहको फिर न प्राप्त होगे और इस ज्ञानसे संपूर्ण भूतों को मुझे परमात्मामें देखोगे ३५ यदि तुम सब पापोंसे अधिक पाप करने वाले हो तौभी सम्पूर्ण पाप रूपी समुद्रको ज्ञानरूपी नौका से तर जावोगे ३६ ॥

यथैधांसिसमिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन॥ ज्ञानाग्निस्सर्वकर्माणिभस्मसात्कुरुतेतथा ३७ नहिज्ञानेनसदृशंपवित्रमिहविद्यते ॥ तत्स्वयंयोगसंसिद्धःकालेनात्मनिविंदति ३८ श्रद्धावांल्लभतेज्ञानंतत्परःसंयतेन्द्रियः ॥ ज्ञानंलब्ध्वापरांशांतिमचिरेणाधिगच्छति ३९॥

हे अर्जुन जैसे जलतीहुई अग्नि लकड़ियोंको भस्म कर डालती है वैसेही ज्ञानरूपीअग्नि सम्पूर्ण बन्ध हेतु कर्मोंको भस्म करदेतीहै ३७ ज्ञानके सदृश दूसरीबस्तु इस लोकमें तप योगादि नहीं क्योंकि किसी कालमें योगाभ्यास से आत्मा में अनायास करकेआपही प्राप्त होंगे ३८ गुरु उपदिष्ट वाक्यमें श्रद्धावान् बिचार शील और इन्द्रिय बश पुरुष ज्ञानको प्राप्त होताहै औरज्ञान प्राप्त होने से परममोक्ष को प्राप्त होता है ३९ ॥

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्माविनश्यति॥ नायंलोकोस्तिनपरोनसुखंसंशयात्मनः ४० योगसंन्यस्तकर्माणंज्ञानसंछिन्नसंशयम् ॥ आत्मव

न्तन्नकर्माणिनिबध्नंतिधनंजय ४१ तस्माद्ज्ञा नसम्भूतंहृत्स्थंज्ञानासिनात्मना ॥ छित्वैनंसंशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठभारत ४२ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्र संहितायां वैया
सिक्यांभीष्मपर्वणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनि
षत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जुन
सम्बादे कर्मसंन्यासयोगो नाम
चतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

जो पुरुष गुरु बाक्यको नहीं जानता और अश्रद्धा-वान् और संशयात्मक बुद्धिवाला है सो नाशको प्राप्त होता है और उसे इसलोक और परलोक में सुखभी नहीं मिलता ४० हेधनंजय अर्जुन जो पुरुषयोगाभ्यास से सम्पूर्ण कर्मों को ईश्वरहीमें अर्पण करता है और ज्ञानसे जिसने संशय को नाशकिया सो बिवेकी पुरुष अपने कर्मफलों से बन्धन में नहीं पड़सक्ता ४१ हेअर्जु-न इसलिये अपने आत्माके संशय को जो अज्ञान से उत्पन्न भया और हृदयमें स्थितहै उसे ज्ञानरूपीतरवार से छेदनकर योगको प्राप्तहो युद्धके लियेउठो ४२ ॥

कर्मसंन्यासयोगचौथाऽध्यायसमाप्तहुआ ४ ॥

अर्जुनउवाच ॥ संन्यासंकर्मणांकृष्णपुनर्यो

गञ्चशंससि ॥ यच्छ्रेयएतयोरेकंतन्मेब्रूहिसुनि
श्चितम् १ श्रीभगवानुवाच ॥ संन्यासःकर्मयोग
श्च निःश्रेयसकरावुभौ ॥ तयोस्तुकर्मसंन्यासा
त्कर्मयोगोविशिष्यते २ ज्ञेयस्सनित्यसंन्यासीयो
नद्वेष्टिनकाङ्क्षति ॥ निर्द्वन्द्वोहिमहाबाहोसुखंबं
धात्प्रमुच्यते ३ ॥

अर्जुन प्रश्न करते हैं हेकृष्ण कर्मसे न्यास औरकर्म
योग अर्थात् कर्मके त्याग और ग्रहण दोनोंकी प्रशंसा
करते हो सो इन दोनों में से जो मंगल और योग्यहो
मुझसे कहो १ श्रीभगवान् उत्तरदेतेहैंकर्म संन्यास और
कर्मयोग दोनों मोक्ष देनेके योग्यहैं परन्तु इनदोनोंमें
कर्म संन्यासरो कर्मयोग श्रेष्ठ है २ हे महाबाहो अर्जुन
जो पुरुष रागऔर द्वेष दोनोंको समान जानकर रहता
है उसे नित्य संन्यासी जानों क्योंकि निर्द्वन्दहो संसार
रूप बन्धसे सुखपूर्वक मुक्त होताहै ३ ॥

सांख्ययोगौपृथग्बालाःप्रवदन्तिनपण्डिताः॥
एकमप्यास्थितःसम्यगुभयोर्विन्दतेफलम् ४ य
त्साङ्ख्यैःप्राप्यतेस्थानंतद्योगैरपिगम्यते ॥ ए
कंसांख्यञ्चयोगञ्च यःपश्यतिसपश्यति ५ सं
न्यासस्तुमहाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः ॥ योगयु
क्तोमुनिर्ब्रह्मनचिरेणाधिगच्छति ६ ॥

कर्म संन्यास और कर्मयोगमें मूर्खलोग भेदकहते हैं और पण्डितनहीं पर इनदोनों मेंसे एककाभी जोअनुष्ठान करेगा सो दोनोंका फल अच्छीभांतिसे पावेगा ४ कैवल्य रूप स्थान जो कर्मसंन्यासी लोगपाते हैं वही कर्मयोग वालेभी पातेहैं और कर्म संन्यास और कर्म योगको जो एक देखताहै उसीका देखना ठीक है ५ हेअर्जुन बिना कर्मयोग के संन्यास दुःखप्राप्ति के हेतु है जो योगयुक्त मौनी होकर संन्यास आश्रयण करेगा सो अल्पकाल में ब्रह्म को प्राप्त होगा ६ ॥

योगयुक्तोविशुद्धात्मा विजितात्माजितेन्द्रियः ॥ सर्वभूतात्मभूतात्माकुर्वन्नपिनलिप्यते ७ नैवकिञ्चित्करोमीतियुक्तोमन्येततत्त्ववित् ॥ पश्यं शृण्वन्स्पृशन्जिघ्र न्नश्नन्गच्छन्स्वपन्श्वसन् ८ प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ॥ इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषुवर्त्तन्तइतिधारयन् ९ ॥

जो पुरुष योगाभ्यास युक्तहो शुद्ध बुद्धि और मनसे इन्द्रियोंको बश करके ईश्वरको सर्वभूत व्यापी जान कर कर्मकर्त्ताहै सो कर्म फलसे बद्ध नहीं होता ७ योग युक्त विवेकी पुरुष यद्यपि इन्द्रियोंका व्यापार करताहै तथापि अपनेको कर्त्ता नहीं जानता क्योंकि देखनेसुन्ने छूने सूंघने,चखने चलने और स्वप्न और श्वास लेनेसे अपने में कर्तृत्वाभिनिवेश नहीं मानता ८ उच्चार

त्यागग्रहण और कूर्माख्य प्राणवायुका संकोचविकाश आदि सम्पूर्णइन्द्रियां अपनाअपनाव्यापारकरतीहैं ९ ॥

ब्रह्मण्याधायकर्म्माणि सङ्गंत्यक्त्वाकरोति यः ॥ लिप्यतेनसपापेनपद्मपत्रमिवांभसा १० कायेनमनसाबुद्ध्याकेवलैरिन्द्रियैरपि ॥ योगिनः कर्मकुर्वंतिसंगंत्यक्त्वात्मशुद्धये ११ युक्तःकर्मफलंत्यक्त्वाशान्तिमाप्नोतिनैष्ठिकीम् ॥ अयुक्तःकामकारेणफलेसक्तोनिवद्ध्यते १२ ॥

सम्पूर्ण कर्मों को परमेश्वरही में अर्पण करके कर्म फलकी आशासे रहित हो जो पुरुष कर्मकरता है सो पापसे नहीं लिप्त होता जैसे जलमें कमलका पत्ता रहताहै तौभी उस्से लिप्त नहीं होता १० शरीरमन बुद्धि और इन्द्रियादिसे तत्तत्कर्म फलकी अपेक्षा छोड़कर योगीलोग चित्त शुद्धिके हेतु कर्म करते हैं ११ परमेश्वर आराधन में तत्परहो कर्म फलकीअपेक्षा छोड़कर कर्म कर कर्मकरनेसे युक्त पुरुष शांतिको प्राप्त होतेहैं और अयुक्त पुरुष कामसे फलासक्त होकर बद्ध रहतेहैं १२॥

सर्वकर्माणिमनसा संन्यस्यास्तेसुखंवशी ॥ नवद्वारेपुरेदेहीनैवकुर्वन्नकारयन् १३ नकर्तृत्वन्नकर्माणिलोकस्यसृजातिप्रभुः ॥ नकर्मफलसंयोगंस्वभावस्तुप्रवर्त्तते १४ नादत्तेकस्यचित्पा

पंनचैवसुकृतंविभुः ॥ अज्ञानेनावृतंज्ञानं तेनमु ह्यन्तिजन्तवः १५ ॥

सब कर्म मनसे त्यागकर जित चित्त पुरुष सुखसे रहता है और नेत्रआदि नवद्वार पुरमें देही न आपकुछ करता और न करताहै १३ सर्वव्यापी ईश्वर जगत्का कर्तृत्व और कर्म आप नहीं सृष्टिकरता परन्तुअनादि अविद्या से कामबश हो स्वाभाविक प्रवृत्त होताहै और ईश्वर नहीं नियोग करता १४ परमेश्वर न किसीको पाप देताहै न पुण्य परन्तु अज्ञान से ज्ञान घेराहै इस-लिये जीव आपही मोहको प्राप्त होताहै १५ ॥

ज्ञानेनतुतदज्ञानंयेषान्नाशितमात्मनः ॥ तेषामादित्यवज्ज्ञानंप्रकाशयतितत्परम् १६ तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ॥ गच्छन्त्यपुनरावृत्तिंज्ञाननिर्धूतकल्मषाः १७ विद्याविनयसम्पन्नेब्राह्मणेगविहस्तिनि ॥ शुनिचैवश्वपाकेच पण्डिताःसमदर्शिनः १८ ॥

जिसका अज्ञान ज्ञानके प्रकाशसे नष्ट भया उसका ज्ञान परमेश्वर का प्रकाशक है जैसे सूर्य अन्धकारदूर करके सब पदार्थोंका प्रकाश करता है १६ जिसकीबुद्धि मन और तात्पर्य परमेश्वरहीमें है उसका स्थानपरमे-श्वरहीहै और वहज्ञान से निर्मलहो पुनरावृत्ति से रहित होकर ब्रह्मको प्राप्तहोताहै १७ परमेश्वरको सर्वव्यापी

जानने वाला बिवेकी बिद्या और बिनयसे युक्त ब्राह्मण चमार और कुत्ता गऊ और हाथीमें भेद नहीं जानता सबको समान देखता है १८ ॥

इहैवतैर्जितःसर्गोयेषांसाम्येस्थितंमनः ॥ निर्दोषंहिसमंब्रह्मतस्माद्ब्रह्मणितेस्थिताः १९ नप्रहृष्येत्प्रियंप्राप्यनोद्विजेत्प्राप्यचाप्रियं ॥ स्थिरबुद्धिरसम्मूढोब्रह्मविद्ब्रह्मणिस्थितः २० बाह्यस्पर्शेष्वशक्तात्माविन्दत्यात्मनियत्सुखम् ॥ सब्रह्मयोगयुक्तात्मासुखमक्षय्यमश्नुते २१ ॥

वे लोग जिनका मन स्वाधीन है इसीलोकमेंसंसार जीत लेतेहैं क्योंकि जिनकी दृष्टिमें ब्रह्मनिर्दोष और समान है अवश्य ब्रह्म भावको प्राप्त हैं १९ जो पुरुष प्रिय वस्तुके प्राप्तहोनेसे हर्ष और अप्रियके प्राप्तहोनेसे बिषाद नहीं करता उसकी बुद्धि निश्चल औरमोहरहित है इसलिये वह ब्रह्मभावको प्राप्तहै २०बाह्य बिषयादिकमें असक्त चित्तवाला पुरुष जो सुख अपने में अनुभव करता है उसअक्षय सुखको समाधिस्थ पुरुष प्राप्त होते हैं २१ ॥

येहिसंस्पर्शजाभोगादुःखयोनयएवते॥ आद्यन्तवन्तःकौंतेयनतेषुरमतेबुधः २२ शक्नोतीहैवयःसोढुंप्राक्शरीरविमोक्षणात् ॥ कामक्रोधोद्भवं

वेगंसयुक्तःससुखीनरः २३ योन्तःसुखोन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेवयः ॥ सयोगीब्रह्मनिर्वाणंब्रह्मभूतोधिगच्छति २४ ॥

हे अर्जुन जो भोग इन्द्रियों की वृत्तिसे उत्पन्नहोते हैं सो दुःखके कारण और उत्पत्ति और विनाशवान् हैं इसलिये बिवेकी पुरुष उनमें नहींरमता २२ जोपुरुष शरीर पतनसे पहिले इसलोकमें कामक्रोधसे उत्पन्न भये मनके वेगको सहन करसक्ता है सो योगयुक्त और सुखीहै २३ जो पुरुष अन्तःकरणमें सर्वदा सुखीरहता और अन्तरमें क्रीड़ा करताहै और ऐसेही अपने मनमें सदा प्रकाशित रहता है सो समाधि युक्त पुरुष ब्रह्म भावको प्राप्तहो मोक्षपाता है २४ ॥

लभन्तेब्रह्मनिर्वाण मृषयःक्षीणकल्मषाः ॥ छिन्नद्वैधायतात्मानःसर्वभूतहितेरताः २५ कामक्रोधवियुक्तानांयतीनांयतचेतसाम् ॥ अभितोब्रह्मनिर्वाणंवर्त्ततेविदितात्मनाम् २६ स्पर्शान्कृत्वाबहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरेभ्रुवोः ॥ प्राणापानौसमौकृत्वानासाभ्यन्तरचारिणौ २७ ॥

जो ऋषी निर्वाण ब्रह्म को प्राप्त हुये हैं उनका कल्मष और भेद बुद्धि दूरहुईहै और मनवशमें है और सम्पूर्ण प्राणीके हितका आचरणकरतेहैं २५ कामक्रोध से रहित नियमित चित्तवाले जो परमेश्वर को यथार्थ

रूपसे जानते हैं सो संन्यासी सर्वत्र निर्वाण हो ब्रह्म को प्राप्त होतेहैं २६ बाह्य स्पर्शों को बाहरकर दृष्टि को भ्रूलता के बीचरख प्राण अपान दोनों को कुंभकसे नासाके अन्तर करके २७ ॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ॥ विगतेच्छाभयक्रोधोयस्सदामुक्तएवसः २८ भोक्तारं यज्ञतपसांसर्वलोकमहेश्वरं ॥ सुहृदंसर्वभूतानां ज्ञात्वामांशान्तिमृच्छति २९ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेवैयासिक्याम्भीष्मपर्वणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोग शास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादे संन्यासयोगो नामपञ्चमोऽध्यायःसमाप्तः ५ ॥

नियमित मनवुद्धि और इन्द्रियवाले पुरुष मौनी होकर इच्छा भय और क्रोधसे रहितहैं उन्हें सदा मुक्त जानो २८ यज्ञ और तपके अनुभव करनेवाला और सम्पूर्ण लोकका ईश्वर और सबका हितकारीजो मुझ को जानताहै सोशांतिको प्राप्त होताहै २९ ॥

संन्यास योग निरूपण पांचवां अध्याय समाप्त हुआ ५ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ अनाश्रितःकर्मफलंकार्यं

कर्मकरोतियः ॥ ससंन्यासीचयोगीचननिरग्निर्नचाक्रियः १ यंसंन्यासमितिप्राहुर्योगंतंविद्धिपाण्डव ॥ नह्यसंन्यस्तसंकल्पो योगीभवतिकश्चन २ आरुरुक्षोर्मुनेर्योगंकर्मकारणमुच्यते ॥ योगारूढ़स्यतस्यैवशमःकारणमुच्यते ३ ॥

श्री भगवान् कहतेहैं जो पुरुष कर्म फलकी अपेक्षा त्यागकर विहित कर्मका आचरण करताहै सो संन्यासी और योगीहैं यदि इष्टापूर्तादिकर्म अर्थात् अग्नि साध्य और अनग्निसाध्य कर्मों का त्यागीहो १ हेपांडवअर्जुन जिसको विवेकी लोग संन्यास कहते हैं उसीको योग जानो क्योंकि बिना मनके संकल्प त्यागे कोई योगी नहीं होता २ ज्ञान योगमें आरूढ़ होने वाले पुरुष का अन्तःकरण शुद्धिद्वारा कर्म कारण कहलाताहै औरसमाधिस्थ पुरुष को इन्द्रिय का निग्रह कारण होताहै ३ ॥

यदाहिनेंद्रियार्थेषुनकर्मस्वनुषज्जते॥सर्वसंकल्पसंन्यासीयोगारूढ़स्तदोच्यते ४ उद्धरेदात्मनात्मानंनात्मानमवसादयेत् ॥ आत्मैवह्यात्मनोबन्धुरात्मैवरिपुरात्मनः ५ बंधुरात्मात्मनस्तस्ययेनात्मैवात्मनाजितः ॥ अनात्मनस्तुशत्रुत्वेवर्तेतात्मैवशत्रुवत् ६ ॥

जब भोग और भोग साधन कर्म में पुरुषको प्रीति

नहीं होती तब योगारूढ़ सब संकल्प संन्यासी कह-
लाता है ४ विवेक ज्ञानसे अपने आत्मा को आपही
संसारसे उद्धारकरै और आत्माको अधोगतिमें न डाले
क्योंकि आत्माही अपना उपकार बन्धु और शत्रुहै ५
जिसने विवेक ज्ञानसे मनको बश किया उसका उप-
कारक बन्धु आत्माही है अविवेकी का अपकारक शत्रु
भी आत्माही है ६ ॥

जितात्मनःप्रशांतस्य परमात्मासमाहितः ॥
शीतोष्णसुखदुःखेषुतथामानापमानयोः ७ ज्ञान
विज्ञानतृप्तात्माकूटस्थोविजितेन्द्रियः ॥ युक्तइत्यु
च्यतेयोगी समलोष्ठाश्मकाञ्चनः ८ सुहृन्मि
त्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ॥ साधुष्वपिच
पापेषुसमबुद्धिर्विशिष्यते ९ ॥

स्वाधीन मन और प्रशांति बुद्धिवाला अर्थात् रागद्वेष
रहित पुरुष जो शीतोष्ण और मान अपमान को स-
मान जानताहै परमात्मा उसके साथही है७ ज्ञान और
बिज्ञान से जिसका मन निराकांक्षित बिकार से रहित
और जितेन्द्रिय है सो योगी यदि लोहा पत्थर और
सोनेको समान जाने तो युक्त कहलाताहै ८ जोपुरुष
इष्ट मित्र और शत्रु से उदासीन द्वेषी और बन्धुका
मध्यस्थहै साधु और पापीको समान देखताहै सोसम
बुद्धि कहलाता है ९ ॥

योगीयुंजीतसततमात्मानंरहासिस्थितः ॥ एकाकीयतचित्तात्मानिराशीरपरिग्रहः १० शुचौ देशेप्रतिष्ठाप्यस्थिरमासनमात्मनः ॥ नात्युच्छ्रितंनातिनीचंचैलाजिनकुशोत्तरम् ११ तत्रैकाग्रं मनःकृत्वायतचित्तेन्द्रियक्रियः ॥ उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये १२ ॥

योगारूढ पुरुष अकांक्षा और प्रतिग्रह छोड़ शरीर और चित्त दोनों को स्वाधीन कर एकान्त में अकेला हो सदा मनको नियुक्त करै १० योगारूढ पुरुषपवित्र भूमि पर अचल वा बहुतऊंचे और न बहुत नीचे तिस पर कुश उसपर व्याघ्र चर्म्म उसपर बस्त्रका आसनबिछावै ११ ऐसे आसन पर बैठ मन एकाग्र करके चित्त और इन्द्रियों का व्यापार शान्त कर मनकीस्थिरताके हेतु योगाभ्यास करै १२ ॥

समंकायाशिरोग्रीवंधारयन्नचलंस्थिरः ॥ संप्रेक्ष्यनासिकाग्रंस्वंदिशश्चानवलोकयन् १३ प्रशांतात्माविगतभीर्ब्रह्मचारिव्रतेस्थितः ॥ मनःसंयम्यमच्चित्तोयुक्तआसीतमत्परः १४ युंजन्नेवंसदात्मानंयोगीनियतमानसः ॥ शान्तिन्निर्वाणपरमांमत्संस्थामधिगच्छति १५ ॥

शरीरमस्तक और कंठको समान और अचलधारण

करके अपने नासिकाग्र को देखता भया दिशा अवलो-
कनसे रहित हो आसन पर बैठे १३ प्रशान्त आत्मा
और भयरहित होकर ब्रह्मचर्य ब्रतमें स्थिरहो मेरीओर
चित्तलगा मुझको पुरुषार्थ समझ मनको योगमेंनियुक्त
करताहै १४ योगारूढ पुरुष सर्बदा इसीप्रकारसेमनको
नियुक्त करता भया शान्त मन होकर मेरे स्वरूपमोक्ष
रूपशान्तिको प्राप्त होताहै १५ ॥

नात्यश्नतस्तुयोगोस्तिनचैकान्तमनश्नतः ॥
नचातिस्वप्नशीलस्यजाग्रतोनैवचार्जुन १६ यु
क्ताहारविहारस्ययुक्तचेष्टस्यकर्म्मसु ॥ युक्तस्वप्ना
वबोधस्ययोगोभवतिदुःखहा १७ यदाविनियतं
चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ॥ निःस्पृहःसर्वकामे
भ्योयुक्तइत्युच्यतेतदा १८ ॥

हे अर्जुन अति भक्षण और नहीं भोजन करनेवाला
बहुत सोने और जागने वाला पुरुष योगकेहेतु योग्य
नहीं १६ जो पुरुष आहार बिहार और कर्म में प्रयत्न
और निद्रा जागरण समान करता है संसाररूप दुःख
दूर करनेवालेयोग को प्राप्त होताहै १७ जबयोगी अपने
में चित्त नियत होकर सम्पूर्ण कामोंसे निस्पृहरहेगा
तब युक्त कहलावैगा १८ ॥

यथादीपोनिवातस्थो नेंगतेसोपमास्मृता ॥
योगिनोयतचित्तस्य युंजतोयोगमात्मनः १९ य

त्रोपरमतेचित्तंनिरुद्धंयोगसेवया ॥ यत्रचैवात्म नात्मानंपश्यन्नात्मनितुष्यति २० सुखमात्यन्तिकंयत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ॥ वेत्तियत्रनचैवायंस्थितश्चलतितत्त्वतः २१ ॥

जैसे निर्बात देश में दीप चंचल नहीं होता वैसेही जब पुरुष युक्त चित्त होकर उत्तम योगाभ्यास करता रहेगा तब यह दृष्टान्त उस युक्त योगी के बिषयमें ठीक होना १६ जिसयोग अवस्था में योगाभ्यास से चित्त निरोध होकर रमता है और मनसे अपने आत्मा को अपने में देखकर संतुष्ट होताहै २० जब आरूढ अवस्था में आत्मतत्त्व से निश्चल और स्थिर होताहै तबयोगी को बहुत सुख मिलताहै जो निरतिशय है और इन्द्रियों से ग्रहण करने के योग्यनहीं केवल ज्ञानग्राह्यहै २१ ॥

यंलब्ध्वाचापरंलाभंमन्यतेनाधिकंततः ॥ यस्मिन्स्थितोनदुःखेनगुरुणापिविचाल्यते २२ तं विद्याद्दुःखसंयोग वियोगंयोगसंज्ञितम् ॥ सनिश्चयेनयोक्तव्योयोगोनिर्विण्णचेतसा २३ संकल्पप्रभवान्कामाँस्त्यक्त्वासर्वानशेषतः ॥ मनसैवेन्द्रियग्रामंविनियम्यसमन्ततः २४ ॥

जिस निरातिशय सुखके प्राप्त होने से दूसरा कोई

अधिक लाभ नहीं मानता और उसके अनुभवसे बहुत दुःख करके भी नहीं चलित होता २२ जिसके जानने से दुःखका बियोग होताहै सो योग निश्चल चित्तसे निश्चय करके अभ्यास करने के योग्यहै २३ संकल्प उत्पन्न सबकामों को निश्शेष करके त्याग करै और चारों ओर से इन्द्रिय ग्रामको मनसे रोंककर योगाभ्यासमें चित्त लगावै २४ ॥

शनैश्शनैरुपरमेद्बुद्ध्याधृतिगृहीतया ॥ आत्मसंस्थंमनःकृत्वानकिंचिदपिचिन्तयेत् २५ यतोयतोनिश्चरतिमनश्चञ्चलमस्थिरम् ॥ ततस्ततोनियम्यैतदात्मन्येववशंनयेत् २६ प्रशान्तमनसंह्येनंयोगिनंसुखमुत्तमम् ॥ उपैतिशान्तरजसंब्रह्मभूतमकल्मषम् २७ ॥

धीरे २ शान्त हो धारण बशीकृत बुद्धिसे आत्मामें मनको स्थिर कर बाह्य विषयोंसे बिमुक्त हो योगाभ्यास करै २५ जिस जिस बिषयसे अनुरक्त हो मन चलताहै उसे २ रोककर अपने आत्माही के बशकरै क्योंकि मन चंचलहै स्थिर नहीं २६ शान्तमनवाले और ब्रह्मस्वरूप में प्राप्त हुये योगीको उत्तम सुख प्राप्त होताहै यदि वह रजोगुण और कल्मष से रहित हो २७ ॥

युंजन्नेवंसदात्मानंयोगीविगतकल्मषः ॥ सुखेनब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तसुखमश्नुते २८ सर्वभूत

स्थमात्मानंसर्वभूतानिचात्मनि ॥ ईक्षतेयोगयु
क्तात्मासर्वत्रसमदर्शनः २६ योमांपश्यतिसर्वत्र
सर्वंचमयिपश्यति ॥ तस्याहन्नप्रणश्यामिसचमे
नप्रणश्यति ३० ॥

ऐसा कल्मष रहित योगी सर्वदा मनको नियोग
करताहुआ ब्रह्म सम्बन्धसे अनायास जीवनमुक्त ताको
प्राप्त होता है २८ योगसे नियुक्त मनकर और सर्वत्र
समदर्शी योगी आत्माको सब भूतों में और सबभूतों
को आत्मामें स्थित देखता है २९ जो पुरुष मुझको
सर्वत्र और मुझमें संपूर्ण जगत् देखता है उससेमेंऔर
वह मुझसे दूर नहीं ३० ॥

सर्वभूतस्थितंयोमाम्भजत्येकत्वमास्थितः ॥
सर्वथावर्तमानोऽपिसयोगीमयिवर्त्तते ३१ आत्मौ
पम्येनसर्वत्रसमंपश्यतियोऽर्जुनः ॥ सुखंवायदि
वादुःखंसयोगीपरमोमतः ३२ अर्जुनउवाच ॥
योऽयंयोगस्त्वयाप्रोक्तःसाम्येनमधुसूदन ॥ एत
स्याहंनपश्यामिचञ्चलत्वात्स्थितिंस्थिराम् ३३॥

जो पुरुष सर्वव्यापी और एकही जानता हुआ सर्व
भूतों में मुझको स्थित जानता है सो किसी प्रकार से
रहे परंतु ज्ञानीहोकर मुझमें प्राप्त होता है ३१ हेअर्जुन
जो पुरुष अपनी आत्माके समान सब प्राणियोंके दुःख

सुखको समझता है सो योगियों में परम उत्तमहै ३२ अर्जुन प्रश्न करते हैं कि हे मधुसूदन यह योग जो तुम ने मन के स्थिरता के हेतु कहा उसकी बहुतकालतक स्थिति नहीं देखता हूं क्योंकि मन चंचल और स्थिर स्वभाव है ३३ ॥

चञ्चलंहिमनःकृष्णप्रमाथिबलवद्दृढम् ॥ तस्याहंनिग्रहंमन्येवायोरिवसुदुष्करम् ३४ श्रीभगवानुवाच ॥ असंशयंमहाबाहोमनोदुर्निग्रहंचलम् ॥ अभ्यासेनतुकौन्तेयवैराग्येणचगृह्यते ३५ असंयतात्मनोयोगोदुष्प्राप्यइतिमेमतिः॥ वश्यात्मनातुयततांशक्योवाप्तुमुपायतः ३६ ॥

हे कृष्ण मन चंचल है और देह इन्द्रियों की पीड़ा करके बिचारसे जीतने के योग्यनहीं और बिषयवासना के अनुरागसे दुर्भेद इसलिये इसका निग्रह अति कठिन जान पड़ताहै जैसे आकाशमें बायु सर्वत्र व्याप्तहै परन्तु कोई उसे रोंक नहीं सक्ता ३४ हे महाबाहो अर्जुन यह तुम्हारा कहना सचहै कि मन चंचल और निग्रह के योग्य नहीं परन्तु परमेश्वराकार अन्तःकरणकी वृत्ति और बिषयों के वैराग्य से निग्रह होताहै ३५ स्थिर मन वाला पुरुष योगप्राप्त होनेके योग्य नहीं यह मुझको निश्चय होताहै जिसका मन बशहै और प्रयत्नभी करता है सो उपाय द्वारा योग प्राप्त करने के योग्य है ३६ ॥

अर्जुनउवाच ॥ अयतिःश्रद्धयोपेतोयोगाच्चलितमानसः॥ अप्राप्ययोगसंसिद्धिंकाङ्क्षतिकृष्णगच्छति ३७ कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिवनश्यति ॥ अप्रतिष्ठोमहाबाहोविमूढोब्रह्मणःपथि ३८ एतन्मेसंशयंकृष्णछेत्तुमर्हस्यशेषतः ॥ त्वदन्यःसंशयस्यास्यछेत्तानह्युपपद्यते ३९ ॥

अर्जुन प्रश्न करते हैं हे कृष्ण जो पुरुष श्रद्धावान् होकर योगमें प्रवृत्त है परन्तु प्रयत्न न करने से योगसे मन चलित होकर योगसिद्धिको न प्राप्तहुआतो उसकी क्या गति होगी ३७ हे महाबाहोकृष्ण कर्म और मोक्ष रहित पुरुष निराश्रय होकर ब्रह्मप्राप्ति मार्गके उपाय में मोहाक्रान्त होनेसे बायुछन्न मेघ की नाईं क्या नष्ट होगा ३८ हेकृष्ण मेरे इस संशय को तुम्हीं दूरकरने के योग्य हो तुमसे अतिरिक्त इस संपूर्ण संशयका निवर्त्तक कोई नहीं ३९ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ पार्थनैवेहनामुत्रविनाशस्तस्यविद्यते ॥ नहिकल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिंतातगच्छति ४० प्राप्यपुण्यकृतांल्लोकानुषित्वाशाश्वतीःसमाः ॥ शुचीनांश्रीमतांगेहेयोगभ्रष्टोभिजायते ४१ अथवायोगिनामेवकुलेभवतिधीमताम्॥एतद्धिदुर्लभतरंलोकेजन्मयदीदृशम् ४२॥

हे तात अर्जुन नष्टपुरुषको इस कर्म भूमि में पातक नहीं और परलोकमें भी नरक प्राप्ति नहीं क्योंकि कोई शुभ कर्मवाले पुरुष दुर्गति को नहीं जाते ४० अल्प कालवाले योग भ्रष्ट पुरुष जिसलोक में अश्वमेधादि यज्ञ करने वाले प्राप्त होते हैं वहां बहुत कालतक निवास करके सदाचार शील धनियों के घरमें उत्पन्न होते हैं ४१ चिरकाल अभ्यासी योग भ्रष्ट पुरुष केवल ज्ञानियों के कुलमें उत्पन्न होते हैं और इसलोकमें इस प्रकारसे सत्कुलमें जन्मपाना दुर्लभ है ४२ ॥

तत्रतंबुद्धिसंयोगंलभतेपौर्वदेहिकम् ॥ यतते चततोभूयःसंसिद्धौकुरुनंदन ४३ पूर्वाभ्यासेन तेनैवह्रि यतेह्यवशोऽपिसः ॥ जिज्ञासुरपियोगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते ४४ प्रयत्नाद्यतमानस्तुयोगी संशुद्धकिल्विषः ॥ अनेकजन्मसंसिद्धस्ततोयाति परांगतिम् ४५ ॥

हे कुरु नंदन उसीकुल में बुद्धिकरके फिरउसी योग को प्राप्तहोते हैं और पूर्व देह सम्बन्ध योग के प्राप्तहोने से फिर अधिक फल प्राप्त करनेका प्रयत्न करते हैं ४३ उस पूर्व अभ्यास से किसी प्रतिबन्धक योगसे इच्छा रहितहोवै तो भी बिषयोंसे मन हटाकर योगमें स्थिर करते हैं और योग इच्छित पुरुष वेदयुक्त कर्म फलसे अधिक मोक्ष पदको प्राप्तहोके युक्त होता है ४४ योगी

पुरुष कल्मषसे शुद्धहोकर अधिक यत्नकरताहुआ अनेक जन्मके योगाभ्याससे सिद्ध और ज्ञानीहोकरउत्तम मोक्ष गति को प्राप्त होता है ४५॥

तपस्विभ्योधिकोयोगीज्ञानिभ्योऽपिमतोऽधिकः ॥ कर्म्मिभ्यश्चाधिकोयोगी तस्माद्योगीभवार्जुन ४६ योगिनामपिसर्वेषाम्मद्गतेनान्तरात्मना ॥ श्रद्धावान्भजतेयोमांसमेयुक्ततमोमतः४७॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्रसंहितायांवैयासिक्यांभीष्मपर्बणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसम्बादे आत्मसंयमयोगोनामषष्ठोऽध्यायः ६ ॥

चांद्रायणादि करने वाले तपस्वियोंसे शास्त्र जानने वालोंसे और इष्टापूर्तादि कर्म्म करने वालों से योगी अधिकहै इसलिये तुमभी योगीहो ४६ जो पुरुष मेरी ओर चित्तलगाकर श्रद्धावान् हो मुझको भजता है सो मेरी बुद्धि में योगियों से श्रेष्ठ है ४७ ॥

आत्मसंयमयोग नामक छठवां अध्याय समाप्तहुआ६ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ मय्यासक्तमनाःपार्थयोगंयुंजन्मदाश्रयः॥असंशयंसमग्रम्मांयथाज्ञास्यसि तच्छृणु १ ज्ञानन्तेहंसविज्ञानमिदंवक्ष्याम्यशेष

तः ॥ यज्ज्ञात्वानेहभूयोन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते २ मनुष्याणांसहस्रेषुकश्चिद्यततिसिद्धये ॥ यततामपिसिद्धानांकश्चिन्मांवेत्तितत्त्वतः ३ ॥

श्रीभगवान् कहतेहैं हे पार्थ जिसका मनमुझमें लगा है और मुझीको आश्रय समझता है सो पुरुष योगाभ्यास करता हुआ निस्संदेह सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य सहित जैसा मुझे जानेगा सो सुनो १ विज्ञान कहे अनुभव सहित यहसम्पूर्ण शास्त्रज्ञान हम तुमसे कहेंगे जिसके जाननेके अनन्तर इस शुभमार्गमें फिर कुछ जानने के योग्यबाकी नहीं रहता २ सहस्र मनुष्योंमें से एक अपने पुण्यकी अधिकता से उत्तम ज्ञानके हेतु यत्न करता है और उन सैकड़ों यत्न करनेवालों में से कोई मुझको यथार्थ करके जानता है ३ ॥

भूमिरापोनलोवायुःखंमनोबुद्धिरेवच ॥ अहंकारइतीयंमेभिन्नाप्रकृतिरष्टधा ४ अपरेयमितस्त्वन्यांप्रकृतिंविद्धिमेपराम् ॥ जीवभूतांमहाबाहोययेदन्धार्य्यतेजगत् ५ एतद्योनीनिभूतानि सर्वाणीत्युपधारय ॥ अहंकृत्स्नस्यजगतःप्रभवः प्रलयस्तथा ६ ॥

पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश मन बुद्धि और अहंकार इन आठ भेदोंसे मेरी प्रकृति भिन्नहै ४ हेमहाबाहो इसके परे अपराप्रकृतिसे जानो जो चेतन जीवस्वरूप

है कि जिससे सम्पूर्ण जगत् धारण होता है ५ स्थावर जंगम रूप सम्पूर्ण भूत इनदो जड़ और चेतन प्रकृतियों से उत्पन्न जानो और ये प्रकृतियां हमी से उत्पन्न भई हैं इस लिये सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि और प्रलयके कारण हमी हैं ६ ॥

मत्तःपरतरंनान्यत्किंचिदस्तिधनंजय ॥ मयिसर्वमिदम्प्रोतंसूत्रेमणिगणाइव ७ रसोहमप्सुकौन्तेयप्रभास्मिशशिसूर्ययोः ॥ प्रणवस्सर्ववेदेषुशब्दःखेपौरुषन्नृषु ८ पुण्योगन्धःपृथिव्यांचतेजश्चास्मिविभावसौ ॥ जीवनंसर्वभूतेषुतपश्चास्मितपस्विषु ९ ॥

हे धनञ्जय अर्जुन मुझसे और कोई श्रेष्ठ नहीं जैसे सूत्र में सब मणियां पिरोई जाती हैं वैसेही सम्पूर्ण जगत् मुझमें पिरोया है ७ हे अर्जुन जलका रस सूर्य्य चंद्रों की प्रभा वेदोंका प्रणव और मनुष्यों का पुरुषार्थ महीं हूं ८ और भी पृथ्वी का सुगंध अग्निका तेज सब भूतों का जीवन और तपस्वियों का तप महीं हूं ९ ॥

वीजंमांसर्वभूतानां विद्धिपार्थसनातनम् ॥ बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मितेजस्तेजस्विनामहम् १० बलबम्लवतांचाहंकामरागविवर्जितम् ॥ धर्माविरुद्धोभूतेषु कामोस्मिभरतर्षभ ११ येचैवसा

त्विकाभावाराजसास्तामसाश्चये ॥ मत्तयेवेतिता न्विद्धिनत्वहन्तेषुतेमयि १२ ॥

हे पार्थ चराचरात्मक भूतों का आदि कारणमुझी को जानो और विवेकियों की बुद्धि और तेजस्वियों का तेज मही हूं १० हे अर्जुन बलवानों का बल काम रागादि से रहित मही हूं और भूतों में धर्म्म से अविरुद्ध काम भी मही हूं ११ सात्विक शम दम आदि और राजस हर्ष विषादादि और तामसशोक मोहादि सब भाव मुझी से उत्पन्न जानो और मैं उनमें नहीं परंतु वे मुझमें हैं १२ ॥

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिःसर्वमिदंजगत् ॥ मोहितन्नाभिजानातिमामेभ्यःपरमव्ययम् १३ दैवीह्येषागुणमयीममामायादुरत्यया ॥ मामेवये प्रपद्यन्तेमायामेतान्तरन्तिते १४ नमान्दुष्कृतिनोमूढ़ाःप्रपद्यन्तेनराधमाः ॥ माययापहृतज्ञान आसुरम्भावमाश्रिताः १५ ॥

इनतीनों गुण स्वरूप भावोंसे यहसब जगत् मोहको प्राप्तहुआ है इसलिये लोग मुझको इससे परनहीं जानते परंतु मैं सर्व विकारसे रहित हूं १३ यह मेरी त्रिगुणात्मक माया अति अद्भुत और दुस्तर है जो लोग मेरे शरणागत होते हैं वही इससे तरजाते हैं १४ पाप शील मोहाक्रान्त अधम नर मुझे नहीं भजते क्योंकि

मायासे उनका ज्ञान नष्टभया इससे वे असुर भावको प्राप्तभये हैं १५ ॥

चतुर्विधाभजन्तेमां जनाःसुकृतिनोऽर्जुन ॥ आर्त्तोजिज्ञासुरर्थार्थीज्ञानीचभरतर्षभ १६ तेषां ज्ञानीनित्ययुक्तएकभक्तिर्विशिष्यते ॥ प्रियोहिज्ञानिनोत्यर्थमहंसचममप्रियः १७ उदारास्सर्वएवैते ज्ञानीत्वात्मैवमेमतम् ॥ आस्थितःसहियुक्तात्मामामेवानुत्तमाङ्गतिम् १८ ॥

हे अर्जुन चारप्रकारके मनुष्य पूर्व पुण्यसे मुझको भजतेहैं अर्थात् जो रागादिसे रहितहैं या जो परमेश्वर को जानने की इच्छा रखते हैं या जो धनअर्थी हैं और जो तत्त्व जाननेवाले हैं १६ इन चारमनुष्यों मेंसे ज्ञानी एक भक्ति करके सर्वदा मुझमें चित्त लगाने से श्रेष्ठ है ज्ञानीको मैं अत्यन्त प्रियहूं और ज्ञानी मुझको १७ और सबभी श्रेष्ठहैं परन्तु ज्ञानी मेरा आत्माहीहै यहनिश्चित है क्योंकि वह मझीमें चित्त लगाकर मुझीको उत्तम गति जानकर आश्रयण करता है १८ ॥

बहूनांजन्मनामन्तेज्ञानवान्माम्प्रपद्यते ॥ वासुदेवस्सर्वमितिसमहात्मासुदुर्लभः १९ कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाःप्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः ॥ तन्तान्नियममास्थायप्रकृत्यानियताःस्वया २० योयोयांयांत

नुम्भक्तःश्रद्धयार्चितुमिच्छति ॥ तस्यतस्याच
लांश्रद्धांतामेवविदधाम्यहम् २१ ॥

बहुत जन्मके अनन्तर ज्ञानी यह जानताहै कि सम्पूर्ण
जगत् बासुदेवहीका स्वरूप है इस लिये ऐसा महात्मा
होना दुर्लभ है १६ जिनका ज्ञान कामादिसे हरण भया
वे किसी न किसी नियमके आश्रयणहो अपने पूर्व जन्म
कीबासनाके आधीन हो उन देवताओंको भजते हैं २०
जो २ भक्त जिस २ मूर्तिकी पूजाको श्रद्धासे इच्छा
करतेहैं उन २ भक्तोंको वैसेही दृढश्रद्धा में उत्पन्न
करताहूं २१ ॥

सतयाश्रद्धयायुक्तस्तस्याराधनमीहते ॥ लभ
तेचततःकामान्मयैवबिहितान्हितान् २२ अन्त
वत्तुफलंतेषांतद्भवत्यल्पमेधसाम् ॥ देवान्देवयतो
यान्तिमद्भक्तायान्तिमामपि २३ अव्यक्तंव्यक्ति
मापन्नंमन्यन्तेमामबुद्धयः ॥ परम्भावमजानन्तो
ममाव्ययमनुत्तमम् २४ ॥

वह भक्त उसी श्रद्धासे युक्तहोउन देवता कीमूर्तियोंकी
पूजाकी इच्छा करतेहैं फिर इसके अनन्तर मेरेकहे हुये
कामों को प्राप्त होतेहैं क्योंकि सब देवतों का स्वरूप
मेंहीहूं इसलियेवे सब मेरे स्वाधीनहैं २२ जिनकी बुद्धि
अल्पहै उनका फलभी बिनाशी है और देव आराधन
करने वाले बिनाशी होकर उन देवतों को प्राप्त होतेहैं

परन्तु जो मुझे यथार्थ करके पूजता है सो नाश रहित परमानन्द रूप मुझको प्राप्त होताहै २३ अबिवेकी पुरुष मुझ अव्यक्तको देह धारी मानतेहैं क्योंकि मेरा स्वरूप जो प्रपंचसे अतिरिक्त श्रेष्ठ और अविनाशीहै उसेनहीं जानते २४ ॥

नाहम्प्रकाशस्सर्वस्य योगमायासमावृतः ॥ मूढ़ोयंनाभिजानातिलोकेमामजमव्ययम् २५ वेदाहंसमतीतानिवर्त्तमानानिचार्जुन ॥ भविष्याणिचभूतानिमान्तुवेदनकश्चन २६ इच्छाद्वेषसमुत्थेनद्वन्द्वमोहेनभारत ॥ सर्वभूतानिसम्मोहंसगैयान्तिपरन्तप २७ ॥

मैं योग मायासे घेराहूं इसलिये सम्पूर्ण जीवोंपर प्रकट नहीं हों तिसीसे लोग मोहको प्राप्त होकर आद्यन्त रहित मुझको नहीं जानते २५ हे अर्जुन मैं भूतभविष्य और वर्त्तमान तीनों कालके भूतोंको जानताहूं परन्तु मुझको कोई नहीं जानता २६ हे भारत अर्जुन राग द्वेष से उत्पन्न सुखदुःखभेद मूलक मोहसे संपूर्ण भूत उत्पत्तिमें मोहकोप्राप्तहोतेहैं २७ ॥

येषान्त्वन्तगतंपापंजनानांपुण्यकर्मणाम् ॥ ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताभजन्तेमांदृढ़व्रताः २८ जरामरणमोक्षायमामाश्रित्यपतन्तिये ॥ तेब्रह्मतद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मंकर्मचाखिलम् २९ साधिभूताधि

दैवंमांसाधियज्ञंचयेविदुः॥ प्रयाणकालेपिचमांते विदुर्युक्तचेतसः ३० ॥

इतिश्री मन्महाभारतेशतसहस्र संहितायां वैया सिक्यांभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीतासूपनि षत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जु नसंबादेज्ञानविज्ञानयोगोनामस प्तमोऽध्यायः॥ ७ ॥

जिन जीवोंका पुण्य कर्मके आचरण से पापनष्ट भया वे सुख दुःख भेद मूलक मोहसे छूटकर दृढ़व्रतहो मेरा भजन करते हैं २८ जो लोग जरामरण दूर होने के हेतु आश्रय होकर प्रयत्न करतेहैं वे सम्पूर्ण शुद्धआ-त्मा स्वरूपब्रह्म और उसके साधन निमित्त कर्मको भी जानते हैं २६ जो लोग अधिभूत अधिदैवत अधियज्ञ सहित मुझको जानतेहैं वे मरणकालमें भी बिवेक युक्त होकर मेरे स्वरूप को जानते हैं ३० ॥

ज्ञानविज्ञानयोगनिरूपणसातवांअध्याय समाप्तहुआ ॥ ७ ॥

अर्जुनउवाच ॥ किन्तद्ब्रह्मकिमध्यात्मंकिंक र्मपुरुषोत्तम । अधिभूतञ्चकिम्प्रोक्तमधिदैवंकिमु च्यते १ अधियज्ञःकथंकोऽत्रदेहेस्मिन्मधुसूदन॥

प्रयाणकालेचकथंज्ञेयोसिनियतात्मभिः २ श्री भगवानुवाच ॥ अक्षरम्ब्रह्मपरमंस्वभावोऽध्यात्ममुच्यते ॥ भूतभावोद्भवकरो विसर्गःकर्मसंज्ञितः ३ ॥

अर्जुन पूछते हैं हेपुरुषोत्तम ब्रह्म क्याहै और अध्यात्म अधिभूत अधिदैवत कर्म क्या कहलाता है १ हेमधुसूदन इस देह में यज्ञ फलदायक और यज्ञ प्रयोजक कौन है और कैसे रहताहै और अन्तकाल में नियत चित्त वाले पुरुष तुमको कैसा जानते हैं २ भगवान कहते हैं ब्रह्म अचल और उत्कृष्ट है और आपही अपने अंशसे जीवरूपहोना उसकास्वभावहै और उसस्वभाव का भोक्तृत्वहोकर देहमें रहना अध्यात्म कहलाता है और जरायुज आदि भूतोंकी उत्पत्ति और उद्भव का करने वाला है विसर्ग अर्थात् देवतों के निमित्त द्रव्य त्याग यज्ञ वही कर्म्म कहलाता है ३ ॥

अधिभूतंक्षरोभावःपुरुषश्चाधिदैवतम् ॥ अधियज्ञोहमेवात्रदेहेदेहभृताम्वर ४ अन्तकालेच मामेवस्मरन्मुक्त्वाकलेवरम् ॥ यःप्रयातिसमद्भावं यातिनास्त्यत्रसंशयः५ यंयंवापिस्मरन्भावंत्यजत्यन्तेकलेवरम् ॥ तन्तमेवैतिकौन्तेयसदातद्भावभावितः ६ ॥

हे प्राणियों में श्रेष्ठ अर्जुन बिनाशी देहादिका अधिकारी अधिभूतहै अपना अंशभूत सम्पूर्ण देवतोंका अधिपति पुरुष अधिदैव कहलाता है इस देहमें मही अन्तःस्थित अधियज्ञ हूं ४ मरण अवस्था में जो पुरुष मेरा स्मरण करताहुआ देहत्याग करताहै सो मेरे स्वरूपको प्राप्तहोता है इसमें कुछ सन्देह नहीं ५ हे अर्जुन अंतकाल जिस २ देवता की भावनासे पुरुष स्मरण करता हुआ देहत्याग करताहै सर्बदा उसी भावना से युक्त होकर उन्हीं देहोंमें प्राप्त होताहै ६ ॥

तस्मात्सर्वेषुकालेषुमामनुस्मरयुध्यच ॥मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ७ अभ्यासयोगयुक्तेनचेतसानन्यगामिना ॥ परमंपुरुषंदिव्यंयातिपार्थानुचिंतयन् ८ कविंपुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः ॥ सर्बस्यधातारमचिंत्यरूपमादित्यवर्णन्तमसःपरस्तात् ९ ॥

इसलिये सर्बदा मेरा स्मरण करते हुये युद्धकरो और मुझमें मन और बुद्धिको अर्पण करो तो मुझीमें प्राप्तहोगे इसमें कुछ संशयनहीं ७ हे पार्थ अभ्यासयोगयुक्त पुरुष एकाग्र चित्तसे स्मरण करते हुयेउसी प्रकाशात्मक परम पुरुषको प्राप्तहोतेहैं ८ जो पुरुष परब्रह्म को सर्बज्ञ अनादि और जगत् का नियम न करनेवाला और परमाणुसे भी सूक्ष्मऔर सम्पूर्ण जगत् का पालन

करने वाला और अचिंत्यरूप और सूर्य्य की नाईं प्रकाशक और प्रकृति से परजानकर ६ ॥

प्रयाणकालेमनसाचलेन भक्त्यायुक्तोयोगबलेनचैव ॥ भ्रुवोर्मध्येप्राणमावेश्यसम्यक् सतंपरंपुरुषमुपैतिदिव्यम् १० यदक्षरंवेदविदोवदन्तिविशंतियद्यतयोवीतरागाः ॥ यदिच्छन्तोब्रह्मचर्यञ्चरन्तितत्तेपदंसंग्रहेणप्रवक्ष्ये ११ सर्वद्वाराणिसंयम्यमनोहृदिनिरुध्यच ॥ मूर्ध्न्याधायात्मनःप्राणमास्थितोयोगधारणाम् १२ ॥

अन्तकाल में स्थिरमन और योगाभ्याससे भक्तियुक्त भ्रूके मध्य प्राणको अच्छी भांति से निवेश करके उस प्रकाशात्मक परम पुरुष का स्मरण करता है सो उसी दिव्य पुरुष में प्राप्तहोता है १० जिसको बेदान्ती लोग अबिनाशी परब्रह्म कहते हैं और रागादिसे रहित यती लोग जिसमें प्रविष्ट होते हैं और तपस्वी लोग जिसके जाननेकी इच्छासे ब्रह्मचर्य्य ब्रतआचरणकरते हैं उस मोक्ष रूप स्थानको हमसंक्षेपमें तुमसे अबकहते हैं ११ सम्पूर्ण द्वारों को रोंक अपने मनको हृदय में स्थिर कर भ्रूमध्य में प्राण को रख योग धारण से युक्तहोके रहै १२ ॥

ओमित्येकाक्षरम्ब्रह्मव्याहरन्मामनुस्मरन् ॥ यःप्रयातित्यजन्देहंसयातिपरमांगतिम् १३ अ

नन्यचेताःसततंयोमांस्मरतिनित्यशः ॥ तस्या
हंसुलभःपार्थनित्ययुक्तस्ययोगिनः १४ मामुपेत्य
पुनर्जन्मदुःखालयमशाश्वतम् ॥ नाप्नुवंतिमहा
त्मानःसंसिद्धिंपरमांगताः १५ ॥

इसके अनन्तर एक अक्षर रूपी परब्रह्म प्रणव को उच्चारण करता भया जो मुझको स्मरण करता है सो शरीर त्यागने पर उत्तमगतिको प्राप्तहोताहै १३ हे पार्थ जो पुरुष निरन्तर अनन्य चित्त होकर प्रतिदिन मेरा स्मरण करताहै ऐसे एकाग्र चित्तवाले योगीकेमैं निकट हूं १४ क्योंकि परम पुरुषार्थ को प्राप्तहुये विवेकी पुरुष मुझको प्राप्तहोकर फिर दुःखके कारण अनित्य जन्म को नहीं पाते १५ ॥

आब्रह्मभुवनाल्लोकाःपुनरावर्तिनोर्जुन ॥ मा
मुपेत्यतुकौंतेयपुनर्जन्मनविद्यते १६ सहस्रयुग
पर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणोविदुः ॥ रात्रिंयुगसहस्रान्तां
तेहोरात्रविदोजनाः १७ अव्यक्ताव्यक्तयःसर्वाः
प्रभवन्त्यहरागमे ॥ रात्र्यागमेप्रलीयंतेतत्रैवाव्य
क्तसंज्ञके १८ ॥

हे अर्जुन यहां से ब्रह्मलोक तक जानकर फिरमृत्यु लोकमें आते हैं क्योंकि ब्रह्मलोक भी बिनाशीहै परंतु मुझमें प्राप्तहोने वाले पुरुष फिर नहीं फिरते १६ जो

लोग योगबलसे कार्य्य ब्रह्मके दिन और रात्रि का सहस्र २ चारोंयुगके तुल्य जानते हैं वे लोग अहोरात्र के जाननेवाले कहलाते हैं १७ अव्यक्त रूप कारण से सम्पूर्ण भूत दिनके आरम्भमें उत्पन्नहोतेहैं ऐसेहीरात्रि के आगम में उसी कारण में लयहोतेहैं १८ ॥

भूतग्रामस्सएवायंभूत्वाभूत्वाप्रलीयते ॥ रात्र्यागमेवशःपार्थप्रभवन्त्यहरागमे १९ परस्त स्मात्तुभावोन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः ॥ यस्स सर्वेषुभूतेषुनश्यत्सुनविनश्यति २० अव्यक्तोऽ क्षरइत्युक्तस्तमाहुःपरमांगतिम् ॥ यम्प्राप्यननि वर्त्तन्तेतद्धामपरमम्मम २१ ॥

हे अर्जुन सम्पूर्ण भूत बारम्बार जन्मतेहुये रात्रिके आगममें लयहोते हैं फिर २ कर्म्मादिके आधीन होकर वही दिनके आरम्भ में उत्पन्न होतेहैं १९ अव्यक्तभाव जो चराचर कारण से पर और अनादि है सो सम्पूर्ण भूतों के नष्टहोने से भी आप नहीं नष्ट होता २० वह अव्यक्त अबिनाशी कहलाता है उसी को बिवेकी लोग उत्कृष्टगति कहते हैं कि जिसको प्राप्तहोकर फिरनहीं फिरते वही स्थान मेरा है २१ ॥

पुरुषःसपरःपार्थभक्त्यालभ्यस्त्वनन्यया ॥ यस्यांतःस्थानिभूतानि येनसर्वमिदंततम् २२

यत्रकालेत्वनावृत्तिमावृत्तिंचैवयोगिनः॥ प्रयाता यांतितंकालंवक्ष्यामिभरर्षभ २३ अग्निर्ज्योति रहःशुक्लःषण्मासाउत्तरायणम् ॥ तत्रप्रयातागच्छंतिब्रह्मब्रह्मविदोजनाः २४॥

हे पार्थ जिस कारण भूतमें सम्पूर्ण भूतस्थितहैं और जिससे सम्पूर्ण यह चराचरात्मक जगत् व्याप्तहै वह पर पुरुष केवल एकाग्र भक्तिसे प्राप्त होनेके योग्य है दूसरे उपाय से नहीं २२ हे अर्जुन जिस कालमें योगी लोग जाके फिरते और नहीं फिरते हैं उसकी अवस्था कहता हूं २३ अर्चिरभिमानी और दिवसाभिमानी और शुक्लपक्ष अभिमानी छः महीने उत्तरायणके स्वरूप हैं इस उत्तरायण मार्ग के जानेवाले ब्रह्मज्ञानी लोग सूर्य्य ज्योति द्वारा ब्रह्मको प्राप्तहोते हैं २४ ॥

धूमोरात्रिस्तथाकृष्णः षण्मासादक्षिणायनम् ॥ तत्रचांद्रमसंज्योतिर्योगीप्राप्यनिवर्त्तते २५ शुक्लकृष्णेगतीह्येतेजगतःशाश्वतेमते ॥ एकयायात्यनावृत्तिमन्ययावर्त्ततेपुनः २६ नैतेसृती पार्थजानन्योगीमुह्यतिकश्चन ॥ तस्मात्सर्वेषु कालेषुयोगयुक्तोभवार्जुन २७ ॥

धूमाभिमानी और रात्रि अभिमानी और कृष्णपक्ष अभिमानी तीनों देवते दक्षिणायन के स्वरूप हैं इस

मार्ग के जानेवाले कर्म्मयोगी चन्द्रज्योति द्वारास्वर्ग को प्राप्त हो वहां इष्टापूर्त्तादि कर्मफलका अनुभवकरके फिर फिरते हैं २५ शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष पूर्वोक्त दोनों गति जगत् के हेतु नित्य और इष्ट हैं इनदो में से शुक्ल पक्ष गतिवाले नहीं फिरते और कृष्णपक्ष गतिवाले फिरते हैं २६ हे पार्थ अर्जुन यह दोनोंमार्ग जानेवाला योगी कभी मोह को नहीं प्राप्त होता इसलिये सर्वदा तुम योगाभ्यास करो २७ ॥

वेदेषुयज्ञेषुतपस्सुचैवदानेषुयत्पुण्यफलंप्रदिष्टम् ॥ अत्येतितत्सर्वमिदंविदित्वायोगीपरंस्थानमुपैतिचाद्यम् २८ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्र संहितायां वैयासिक्यांभीष्मपर्बणिश्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादेमहापुरुषयोगोनाम

अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

चारों वेद जाननेसे यज्ञ तप और दान करनेसे जो फल प्राप्य हैं इनसे बढ़कर पूर्वोक्त तत्त्व के जानने से उत्तम जगत् का कारण भूत मोक्ष रूपस्थानको प्राप्त होता है २८ ॥

पुराण पुरुष उत्तम लोग निरूपण आठवां अध्याय समाप्त हुआ ८ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ इदन्तुतेगुह्यतमंप्रवक्ष्या
म्यनसूयवे ॥ ज्ञानंविज्ञानसहितंयज्ज्ञात्वामोक्ष्य
सेऽशुभात् १ राजविद्याराजगुह्यंपवित्रमिदमुत्त
मम् ॥ प्रत्यक्षावगमंधर्म्यंसुसुखंकर्त्तुमव्ययम् २
अश्रद्दधानाःपुरुषाधर्म्मस्यास्यपरन्तप ॥ अप्रा
प्यमान्निवर्तन्तेमृत्युसंसारवर्त्मनि ३ ॥

श्रीभगवान् कहते हैं यह उपासना सहित गोपनीय
ज्ञान तुमसे हम कहेंगे क्योंकि तुम निर्दोष हो जिसके
जानने से इस अशुभ संसार से मुक्त होगे १ यह उत्तम
विद्या गोपनीय पवित्र और अत्यन्त श्रेष्ठ दृष्टफल और
धर्म्म सहितहै इसलिये यह सुखसे तुम्हारे करनेकेयोग्य
है क्योंकि इसका फल अक्षयहै २ हे अर्जुन इस मोक्ष
के देने वाले धर्म्म श्रद्धा रहित हो पुरुष मुझ को नहीं
प्राप्तहोता फिर इस मृत्युरूप संसार में आता है ३ ॥

मयाततमिदंसर्वंजगदव्यक्तमूर्त्तिना॥ मत्स्था
निसर्वभूतानिनचाहंतेष्ववस्थितः ४ नचमत्स्था
निभूतानिपश्यमेयोगमैश्वरम् ॥ भूतभृन्नचभूत
स्थोममात्माभूतभावनः ५ यथाकाशस्थितोनि
त्यंवायुःसर्वत्रगोमहान् ॥ तथासर्वाणिभूतानिम
त्स्थानीत्युपधारयद ॥

यह सम्पूर्ण जगत् मुझ से व्याप्त है और मैं अव्यक्त

मूर्त्ति हूं और चराचरआदि सम्पूर्ण भूत मुझी में स्थित हैं मैं उनमें नहीं ४ सम्पूर्ण भूत मुझ से स्थित नहीं यह मेरा ऐश्वर्य योग देखो और भूतों का धारण करने वाला महीं हूं परन्तु उनमें स्थित नहीं मेरा स्वरूपही उनका पालन करनेवाला है ५ जैसे सर्वदा महान् वायु चारों ओर व्याप्त होकर आकाश में स्थितहै परंतु असंग वैसेही जरायुजादि चारों प्रकार के भूत मुझमें स्थितजानो ६ ॥

सर्वभूतानिकौन्तेय प्रकृतिंयान्तिमामिकाम्॥ कल्पक्षयेपुनस्तानिकल्पादौविसृजाम्यहम् ७ प्रकृतिंस्वामवष्टभ्यविसृजामिपुनःपुनः ॥ भूतग्राममिमंकृत्स्नमवशंप्रकृतेर्वशात् ८ नचमांतानि कर्माणिनिवध्नंतिधनञ्जय ॥ उदासीनवदासीन मसक्तन्तेषुकर्म्मसु ९ ॥

हे अर्जुन सम्पूर्ण भूत प्रलय काल में मेरी त्रिगुणात्मकमायामें लीन होते हैं फिर उन्हें कल्प के आदि में उत्पन्न करता हूं ७ मैं अपनी त्रिगुणात्मक माया को स्वीकार करके बारम्बार प्रलय में लीन भये हुये फिर सम्पूर्ण भूतोंको उनके कर्म्मानुसार उन्हें उत्पन्न करता हूं ८ हे अर्जुन पूर्वोक्त कर्म मुझको बंध के कारण नहीं हो सक्के क्योंकि उन कर्मों से मैं इच्छा रहित और उदासीन की नाईं स्थित हूं ९ ॥

मयाध्यक्षेणप्रकृतिःसूयतेसचराचरम् ॥ हेतु नानेनकौन्तेयजगद्विपरिवर्त्तते १० अवजानंति मांमूढामानुषींतनुमाश्रितम् ॥ परम्भावमजान न्तोममभूतमहेश्वरम् ११ मोघाशामोघकर्माणो मोघज्ञानाविचेतसः ॥ राक्षसीमासुरींचैवप्रकृतिं मोहिनींस्थिताः १२॥

हे अर्जुन मुझ साक्षी भूतके निमित्तसे त्रिगुणात्मक प्रकृति चराचर जगत्को उत्पन्न करतीहै और इसी हेतु से सम्पूर्ण जगत् मेरे निमित्तमात्र से बारम्बार उत्पन्न और नष्ट होजाताहै १० अविवेकी लोग मुझको मनुष्य देह के सम्बन्ध से मनुष्य ही जानकर अनादर करते हैं परंतु सब भूतोंकाकारण ईश्वर स्वरूप परम भाव मेरा नहीं जानते ११ उन्हें आसुरी प्रकृति में स्थित जानों जिनकी आशा कर्म और ज्ञान निष्फल है और उनका चित्त विक्षिप्त और हिंसा अनुमानादि कर्म्म स्वभाव से युक्त है उनकी बुद्धिभी मोहाक्रान्त है १२ ॥

माहात्मानस्तुमांपार्थदैवींप्रकृतिमाश्रिताः ॥ भजन्त्यनन्यमनसोज्ञात्वाभूतादिमव्ययम् १३ सततंकीर्तयंतोमांयतन्तश्चदृढ़व्रताः ॥ नमस्य न्तश्चमांभक्त्यानित्ययुक्ताउपासते १४ ज्ञानय

ज्ञेनचाप्यन्येयजन्तोमामुपासते ॥ एकत्वेनपृथक्त्वेनबहुधाविश्वतोमुखम् १५ ॥

हे अर्जुन जो बिवेकी लोग सात्विक धर्म्म के आश्रयण हो अन्य चित्तहो मुझको नाश रहित जगत् का कारण जानकर भजते हैं उन्हें दैवी प्रकृति में स्थित जानों १३ ऐसे लोग सर्वदा मेरे भजन और दृढ़ नेम से मेरे जानने के हेतु उद्योग करते रहते हैं और भक्ति से युक्तहो नमस्कारकरते हुये स्थिर चित्तसे मेरी उपासना करते हैं १४ कोई लोग ज्ञान योग से पूजाकरते हुये मेरी उपासना करते हैं अद्वैत उपास्य और उपासक भाव से बहुधा विश्व स्वरूप मुझ को जानते हैं १५ ॥

अहंक्रतुरहंयज्ञःस्वधाहमहमौषधम् ॥ मंत्रोहमहमेवाज्यमहमग्निरहंहुतम् १६ पिताहमस्यजगतोमाताधातापितामहः ॥ वेद्यंपवित्रमोंकारऋक्सामयजुरेवच १७ गतिर्भर्ताप्रभुःसाक्षीनिवासःशरणंसुहृत् ॥ प्रभवःप्रलयस्थानंनिधनंवीजमव्ययम् १८ ॥

वेद बिदित अग्निष्टोमादिये धर्म्म शास्त्र उक्त पांचो यज्ञ पितर हेतु श्राद्धादि औषधी होमका मन्त्र सामग्री और अग्निहोमादि सब महीं हूं १६ इस जगत्का पिता माता धाता और पितामह महीं हूं ज्ञेय पवित्र ओंकार और ऋग्यजु सामवेद भी महींहूं १७ कर्म्म फल और

जगत् का पोषणकरता और नियन्ता साक्षी भोग स्थान रक्षक और हित कर्त्ता और सृष्टिकर्त्ता और संहार कर्त्ता और स्थित धर्म्म का आधार और आलय का स्थान और अबिनाशी कारण महीं हूं १८ ॥

तपाम्यहमहंबर्षंनिगृह्णाम्युत्सृजामिच॥ अमृतंचैवमृत्युश्चसदसच्चाहमर्जुन १९ त्रैविद्यामां सोमपाःपूतपापायज्ञैरिष्ट्वास्वर्गतिंप्रार्थयन्ते ॥ ते पुण्यमासाद्यसुरेन्द्रलोक मश्नंतिदिव्यान्दिविदेवभोगान् २० तंतेभुक्त्वास्वर्गलोकंविशालंक्षीणे पुण्येमर्त्यलोकंविशंति ॥ एवंत्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतंकामकामालभंते २१ ॥

सन्तापकरने वाला सूर्यका तेजऔर जल आकर्षण करने वालाऔर बिसर्जन करनेवाला और जीवनमृत्यु औरसत असत हेअर्जुनमहींहूं १९ तीनोंवेद केउपासना करने वाले यज्ञ शेष सोमलता अन्नके अनन्तर कल्मष रहितहो अग्निष्टोमादियाग समाप्त करके स्वर्गलोक को प्रार्थना करते हुये वे लोग अपने पुण्यके अनुसार इन्द्र लोक को दिव्यदेव भुवनका अनुभव करतेहैं २० वेलोग बिशाल स्वर्गलोकका अनुभव करके पुण्य रहित होनेसे फिर मृत्युलोकमें आतेहैं इसी प्रकारसे त्रैवेद के अनुसारचलनेवाले कामादि भोगोंकी इच्छासे गमना गमन को प्राप्तहोते हैं २१ ॥

अनन्याश्चिन्तयन्तोमांयेजनाःपर्युपासते ॥ तेषांनित्याभियुक्तानांयोगक्षेमंवहाम्यहम् २२येऽप्यन्यदेवताभक्तायजन्तेश्रद्धयान्विताः॥ तेपिमामेवकौन्तेययजन्तेविधिपूर्वकम् २३ अहंहिसर्वयज्ञानांभोक्ताचप्रभुरेवच॥नतुमामभिजानंतितत्त्वेनातश्च्यवन्तिते २४ ॥

जो लोग केवलमेरे आश्रय होकर अन्यको त्यागकर उपासना करतेहैं उन्हें नित्ययुक्त कुशल महीं करता हूं २२ जो लोग अन्य देवता की भक्ति करके श्रद्धा युक्त पूजा करते हैं वेभी अविधि पूर्वक मेरीही पूजा करते हैं २३ सम्पूर्ण यज्ञोंका भोक्ता और स्वामी महींहूं इस निश्चय से जो लोग मुझे नहीं जानते वेही संसार में गिरते हैं २४ ॥

यान्तिदेवव्रतादेवान्पितॄन्यान्तिपितृव्रताः॥ भूतानियांतिभूतेज्यायांतिमद्याजिनोपिमाम् २५ पत्रंपुष्पंफलंतोयं योमेभक्त्याप्रयच्छति ॥ तदहं भक्त्युपहृतमश्नामिप्रयतात्मनः २६ यत्करोषि यदश्नासियज्जुहोषिददासियत् ॥ यत्तपस्यसि कौन्तेयतत्कुरुष्वमदर्पणम् २७ ॥

इन्द्रादि देवतोंके व्रतवाले और पितरोंके उपासक और विनायकादि भूतों के उपासना करनेवाले अपने

उपास्यमें प्राप्तहोते हैं और मेरे उपासक मुझमें लय होते हैं २५ जो भक्तिकरके पत्र पुष्प फल और जल मुझे अर्पण करता है उस निश्चित चित्तवाले का फल और पुष्पादि सब मैं लेताहूं २६ हे अर्जुन जो तुम करते खाते होम करते या दान और तप करतेहो सो सब मुझे अर्पण करो २७ ॥

शुभाशुभफलैरेवंमोक्ष्यसेकर्म्मबन्धनैः ॥ संन्यासयोगयुक्तात्माबिमुक्तोमामुपैष्यसि २८ समोऽहंसर्वभूतेषुनमेद्वेष्योऽस्तिनप्रियः ॥ येभजंतितुमांभक्त्यामयितेतेषुचाप्यहम् २९ अपिचेत्सुदुराचारोभजतेमामनन्यभाक् ॥ साधुरेवसमन्तव्यःसम्यग्व्यवसितोहिसः ३० ॥

इस प्रकार के शुभाशुभ कर्म्म अप्पर्ण करनेसे कर्म्म बन्धनसे मुक्त होंगे क्योंकि संन्यास योगयुक्त चित्तवाले मुक्त होकर मुझीमें प्राप्तहोते हैं २८ मैं सम्पूर्ण भूतोंमें समहूं और मेरा न कोई शत्रुहै न प्रिय जो भक्ति से मेरा भजन करतेहैं वेमुझमें हैं और मैं उनमें हौं २९ जोपुरुष दुराचारी भी होपरंतु अनन्यभक्तहोकर मुझको भजताहै वह साधुमाननेकेहीयोग्य और शुभकारीहै ३०

क्षिप्रंभवतिधर्मात्माशश्वच्छांतिन्निगच्छति ॥ कौन्तेयप्रतिजानीहिनमेभक्तःप्रणश्यति ३१ मांहिपार्थव्यपाश्रित्ययेपिस्युःपापयोनयः ॥ स्त्रियो

बैश्यास्तथाशूद्रास्तेपियांतिपरांगतिम् ३२ किं पुनर्ब्राह्मणाःपुण्याभक्ताराजर्षयस्तथा॥ अनित्य मसुखंलोकमिमंप्राप्यभजस्वमाम् ३३ ॥

हे अर्जुन जिसकी बुद्धि धर्म्ममें शीघ्र होतीहै वह पुरुष बारम्बारशांतिको प्राप्तहोताहै यहबाततुम निश्चय करके जानों कि मेराभक्त नाशको कभीनहीं प्राप्त होता ३१ हे अर्जुन नीच लोग और स्त्री बैश्य और शूद्रादि भी मेरी शरणागति होनेसे उत्कृष्ट गतिको प्राप्तहोते हैं ३२ सुकृती ब्राह्मण और भजन शीलराजऋषि लोगोंके लिये संगति प्राप्त होनेमें क्यासंदेहहै इसलिये तुमइस अविनाशी लोकमें शरीर पाकर मेरा भजनकरो ३३ ॥

मन्मनाभवमद्भक्तोमद्याजीमान्नमस्कुरु ॥ मामे बैष्यसियुक्त्वैवमात्मानंमत्परायणः ३४ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेवैयासिक्याम्भीष्मपर्वाणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोग शास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादेराजविद्याराजगु ह्ययोगोनामनवमोऽध्यायः ९ ॥

केवल मेरी ओर चित्त लगाकर मेरी भक्तिमें दृढ़ हो मेरी पूजा और मुझे नमस्कार करतेहुये मुझी को

उत्तमगति समझ मुझमें चित्त एकाग्रकरनेसे मुझ को प्राप्त होगे ३४ ॥

राज बिद्या राजगुह्य योग निरूपण नववां
अध्याय समाप्त हुआ ९ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ भूयएवमहाबाहोश्रृणुमे परमंबचः ॥ यत्तेहंप्रीयमाणायवक्ष्यामिहितकाम्यया १ नमेविदुःसुरगणाःप्रभवन्नमहर्षयः ॥ अहमादिर्हिदेवानांमहर्षीणांचसर्बशः २ योमामजमनादिञ्चवेत्तिलोकमहेश्वरम् ॥ असंमूढ़ःसमर्त्येषुसर्बपापैः प्रमुच्यते ३ ॥

भगवान् कहतेहैं हेमहा बाहो अर्जुन औरएक उत्तम बात सुननेके योग्यहै सोसुनो किजिस कारणमैं प्रेमसे तुम्हारे हितके हेतु कहताहूं १ इन्द्रादि देवगण और बशिष्ठादि महा ऋषिलोग मेरी उत्पति नहींजानते मैं सम्पूर्ण देवतों और ऋषियोंका आदि कारणहूं २ जो पुरुष मुझको उत्पतिरहित सनातन और सम्पूर्णलोक का ईश्वर जानताहै सोपुरुष मनुष्योंमें मोहरहित होकर सम्पूर्ण पापोंसे मुक्तहोताहै ३ ॥

बुद्धिर्ज्ञानमसंमोहःक्षमासत्यंदमःशमः ॥ सुखंदुःखंभवोभावोभयञ्चाभयमेवच ४ अहिंसासमतातुष्टिस्तपोदानंयशोऽयशः ॥ भवन्तिभावाभू

तानांमत्तएवपृथग्विधाः ५ महर्षयःसप्तपूर्वेचत्वा रोमनवस्तथा ॥ मद्भावामानसायातायेषांलोक इमाःप्रजाः ६ ॥

बुद्धि अर्थात् सारासार विवेक उत्तम ज्ञान विषय और निर्मोह सहना सत्य और बाह्य और आन्तरीय इन्द्रियोंका निग्रहसुखदुःखउत्पत्ति प्रलयभयऔरनिर्भय ४ अहिंसा समता तुष्टितप दानयश औरअयशयह सब प्राणियोंके नानाप्रकारकेभाव मुझीसे उत्पन्नहोते हैं ५ भृगु आदिसात महाऋषि और स्वायम्भुवादि मनु और सनकादिचारों ज्ञानी योंही मेरे संकल्पसे भये जिनकी यह सब ब्राह्मणादि प्रजा लोकमें बर्तमानहैं ६ ॥

एतांविभूतियोगंचममयोवेत्तितत्वतः ॥सोवि कंपेनयोगेनयुज्यतेनात्रसंशयः ७अहंसर्वस्यप्रभ वोमत्तःसर्वंप्रवर्त्तते ॥ इतिमत्वाभजंतेमांबुधाभाव समन्विताः ८ मच्चित्तामद्गतप्राणाबोधयंतःपरस्प रम् ॥कथयंतश्चमांनित्यन्तुष्यंतिचरमंतिच९॥

जोपुरुष मेरी बिभूति और ऐश्वर्य लक्षण योगको यथार्थ रूपसेजानताहै सोनिश्चलचित्तसेएकाग्र समाधि में युक्त होताहै इसमें कुछ संदेह नहीं ७ क्योंकि यह सम्पूर्ण जगत्का भृगुआदि रूपसे उत्पत्तिका रूप मैंहीहूं और मुझीसे बुद्धि और ज्ञानइत्यादि सम्पूर्ण भाव प्रवृत्त होतेहैं ऐसाजानकर विवेकीलोग प्रीतियुक्त होके मेरा

भजन करतेहैं ८ मुझमें चित्तलगा और चक्षुआदि वाह्य इन्द्रियोंको निरोधकर एक दूसरेका प्रमाण पूर्बक बोध करतेहुये सर्बदा मुझको अनादि कहतेहुये संतोष और कैवल्यको प्राप्त होतेहैं ९ ॥

तेषांसततयुक्तानांभजतांप्रीतिपूर्वकम् ॥ददामिबुद्धियोगन्तंयेनमामुपयान्तिते १० तेषामेवानुकंपार्थमहमज्ञानजन्तमः ॥ नाशयाम्यात्मभावस्थोज्ञानदीपेनभास्वता ११ अर्जुनउवाच ॥ परंब्रह्मपरंधामपवित्रंपरमंभवान् ॥ पुरुषंशाश्वतंदिव्यमादिदेवमजंविभुम् १२ ॥

वे जो सर्बदा प्रीतिसे भजन करते और चित्तयुक्त रहतेहैं उनकोमैं ऐसा विवेक ज्ञान देताहूं किजिस करके वे मुझको प्राप्त होतेहैं १० उनके अनुग्रह के हेतु मैं उनकी बुद्धिप्रवृतीमें स्थितहो प्रकाशमान ज्ञानरूपदीपरूपसे अज्ञानजनित संसाररूपी अंधकारको नाशकरताहूं ११ अर्जुन प्रश्न करतेहैं हेकृष्ण तुम्हींपरब्रह्म चराचरके आश्रय परम पवित्र सनातन नित्य पुरुष शब्द बाचक प्रकाश स्वरूप सम्पूर्ण देवतोंके आदि उत्पति रहित और व्यापकहो १२ ॥

आहुस्त्वामृषयस्सर्वेदेवर्षिनारदस्तथा ॥ असितोदेवलोव्यासःस्वयंचैवब्रवीषिमे १३ सर्वमेतदृतंमन्येयन्मांवदसिकेशव ॥ नहितेभगवन्व्य

क्तिविदुर्देवानदानवाः १४ स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थत्वंपुरुषोत्तम ॥ भूतभावनभूतेश देवदेव जगत्पते १५ ॥

भृगुआदि महाऋषि और नारदजोदेवऋषि और असित और देवल और व्यास इत्यादि सब तुम्हारा स्वरूप कहतेहैं और तुमभी मुझसे कहतेहौ १३ हेकेशव जो तुम मुझसेकहतेहौसोमैं सबयथार्थ जानताहूं क्योंकि तुम्हारा स्वरूप देवता और दानवलोगभी नहीं जानते १४ हेपुरुषोत्तम तुमआपही अपने स्वभावसे आपको जानतेहो और तुमभूतोंके उत्पन्न करनेवाले और उनके नियमन करनेवालेहौ और तुम देवतोंके देवता और जगत्के प्रभुहौ १५ ॥

वक्तुमर्हस्यशेषेणदिव्याह्यात्मविभूतयः ॥ याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वंव्याप्यतिष्ठसि १६ कथंविद्यामहंयोगिंस्त्वांसदापरिचिन्तयन् ॥ केषु केषुचभावेषुचिन्त्योसिभगवन्मया १७ विस्तरेणात्मनोयोगंविभूतिंचजनार्दन ॥ भूयःकथयतृप्तिर्हिशृण्वतोनास्तिमेमृतम् १८ ॥

हे कृष्ण जिन विभूतियोंसे तुम इन सम्पूर्ण लोकों में व्याप्त होकर रहतेहौ तिनके कहनेके योग्यतुम्ही हौ क्योंकि वह विभूतियां अति अद्भुतहैं १६ हेयोगपुरुष भगवन् मैं तुम्हें सर्वदा चिन्तन करते भये कौनसी

विभूति सो जानों और किन २ पदार्थोंमें स्मरण करने के योग्य हौ १७ हे जनार्द्दन फिर तुम विस्तार करके अपनायोग ऐश्वर्य्य और विभूति कहो क्योंकि इस अमृत वाक्यके सुननेसे मैं नहीं तृप्त होता १८ ॥

श्रीभगवानुवाच॥ हन्ततेकथयिष्यामिदिव्या ह्यात्मविभूतयः॥प्राधान्यतःकुरुश्रेष्ठनास्त्यंतो विस्तरस्यमे १९ अहमात्मागुडाकेशसर्वभूताशयस्थितः ॥ अहमादिश्चमध्यञ्चभूतानामंतएवच २०आदित्यानामहंबिष्णुर्ज्योतिषांरबिरंशुमान्॥ मरीचिर्मरुतामस्मिनक्षत्राणामहंशशी २१ ॥

भगवान् कहते हैं हे कुरुश्रेष्ट अर्जुन फिर मैं तुमसे अपनी दिब्य आत्म बिभूतियों मेंसे जो प्रधान हैं तिन्हैं निरूपण करताहूं क्योंकि मेरी बिभूतियों के बिस्तार का अंत नहीं १९ हे गुड़ाकेश अर्जुन मैं सब भूतों के अनित्य गुण वृत्ति में सर्व्वज्ञत्व गुणोंसे नियंता होके स्थितहों और सब भूतोंका आदि मध्य अन्त भी महीं हूं २० बारह सूर्य्योंमें बामन और प्रकाशित बिषयों में कान्ति युक्त सूर्य्य और बायुमें मरीचि और नक्षत्रों में चन्द्र भी महींहूं २१ ॥

वेदानांसामवेदोस्मि देवानामस्मिवासवः ॥ इन्द्रियाणांमनश्चास्मिभूतानामस्मिचेतना २२ रुद्राणांशंकरश्चास्मिबित्तेशोयक्षरक्षसाम् ॥ बसू

नांपावकश्चास्मिमेरुःशिखरिणामहं २३ पुरोध सांचमुख्यंमांविद्धिपार्थबृहस्पतिम् ॥ सेनानी नामहंस्कन्दःसरसामस्मिसागरः २४ ॥

चार वेदोंमें सामवेद और देवतोंमें इन्द्र और ज्ञान इंद्रियोंमें मन और भूतोंमें ज्ञान शक्ति भी महींहूं २२ रुद्रोंमें शंकर यक्ष और राक्षसों में कुबेर आठवसुओं में अग्नि और शिखरवाले पर्वतों में मेरु महीं हूं २३ हे पार्थ पुरोहितों में मुख्य बृहस्पति और सेना पतियों में कार्त्तिकेय और तड़ागों में सागर महीं हूं २४ ॥

महर्षीणांभृगुरहंगिरामस्म्येकमक्षरम् ॥यज्ञा नांजपयज्ञोस्मिस्थावराणांहिमालयः २५ अश्व त्थःसर्ववृक्षाणांदेवर्षीणांचनारदः ॥गन्धर्वाणांचि त्ररथःसिद्धानांकपिलोमुनिः २६उच्चैःश्रवसमश्वा नांविद्धिमामम्मृतोद्भवम् ॥ ऐरावतंगजेन्द्राणांनरा णांचनराधिपम् २७ ॥

महाऋषियों में भृगु और वाणियों में प्रणव और यज्ञों में जपयज्ञ और स्थावरों में हिमाचल महींहूं २५ सम्पूर्ण वृक्षों में पीपर और देवऋषियों में नारद और गंधर्वोंमें चित्ररथ और सिद्धोंमें कपिलमुनि महींहूं २६ घोड़ोंमें उच्चैःश्रवस नामक जो क्षीरसागर में उत्पन्न भयाहुआ अश्वहै और गजोंमें ऐरावत और मनुष्यों में राजा महीं हूं २७ ॥

आयुधानामहंवज्रं धेनूनामस्मिकामधुक् ॥ प्रजनश्चास्मिकन्दर्पःसर्पाणामस्मिवासुकिः २८ अनन्तश्चास्मिनागानांवरुणोयादसामहम् ॥ पितॄणामर्य्यमाचास्मियमःसंयमतामहम् २९ प्रह्लादश्चास्मिदैत्यानांकालःकलयतामहम् ॥ मृगाणाञ्चमृगेंद्रोहंवैनतेयश्चपक्षिणाम् ३० ॥

शस्त्रोंमें बज्र और गौवोंमें कामधेनु और प्रजा उत्पति करने वालोंमें कामदेव और सर्पोंमें बासुकी महींहूं २८ निर्विष सर्पोंमें अनन्त अर्थात् आदि शेष और जल बासियोंमें बरुण और पितृगणों में अर्य्यमा और दण्ड करने वालोंमें यमराज महींहूं २९ दैत्यों में प्रह्लाद और नाशकरने वालों में काल और मृगों में राजासिंह और पक्षियोंमें गरुड महींहूं ३० ॥

पवनःपवतामस्मिरामःशस्त्रभृतामहम्॥झषाणांमकरश्चास्मिस्रोतसामस्मिजाह्नवी ३१ सर्गाणामादिरन्तश्चमध्यञ्चैवाहमर्जुन ॥ अध्यात्मविद्याविद्यानांवादःप्रवदतामहम् ३२ अक्षराणामकारोस्मिद्वन्द्वःसामासिकस्यच ॥ अहमेवाक्षयःकालोधाताहंविश्वतोमुखः ३३ ॥

पवित्र करने वालोंमें बायु और शस्त्रधारियोंमें राम और जलचर मच्छादिकोंमें मगर और नदियोंमें गंगा

महींहूं ३१ उत्पन्न वस्तुओंमें आदि अन्तमें और मध्यमें और विद्योंमें वेदान्त विद्या और वादियों में वाद महीं हूं ३२ वर्णोंमें अकार और समासों में समूहार्थक द्वंद्व समास और क्षणादि कालों में अक्षयकाल और पालन करनेवालोंमें सब कर्म्मफल विधाता धातामहींहूं ३३ ॥

मृत्युस्सर्वहरश्चाहमुद्भवश्चभविष्यताम् ॥ कीर्तिःश्रीर्वाक्चनारीणांस्मृतिर्मेधाधृतिःक्षमा ३४ वृहत्सामतथासाम्नांगायत्रीछन्दसामहम् ॥ मासानांमार्गशीर्षोहमृतूनांकुसुमाकरः ३५ ॥ द्यूतं छलयतामस्मितेजस्तेजस्विनामहम् ॥ जयोस्मि व्यवसायोस्मिसत्वंसत्ववतामहम् ३६ ॥

हरणहारों में मृत्यु और भविष्य कल्पों में अभ्युदय अर्थात् इष्टअर्थ और लाभ महींहूं और स्त्री शब्दबाच्य में कीर्त्ति वाणी सम्पत्ति स्मृति बुद्धि धारण शक्ति और क्षमा महींहूं ३४ साम ऋचाओं में इन्द्रस्तुति की वृहत्साम ऋचा और छन्दोंमें गायत्री छन्द और महीनोंमें अगहन और ऋतुओंमें बसन्तऋतुमहींहूं ३५ छलियों में जुवा और तेजस्वियों में तेज और जयशीलों में जय उद्योगियों में व्यवसाय और सत्ववालों में सत्व रूप महींहूं ३६ ॥

वृष्णीनांवासुदेवोस्मि पाण्डवानांधनंजयः ॥ मुनीनामप्यहंव्यासःकवीनामुशनाकविः ३७ द

एडोदमयतामस्मिनीतिरस्मिजिगीषताम् ॥ मौनं
चैवास्मिगुह्यानांज्ञानंज्ञानवतामहम् ३८ यच्चा
पिसर्वभूतानांबीजंतदहमर्जुन ॥ नतदस्तिविनायत्
स्यान्मयाभूतंचराचरम् ३९ ॥

वृष्णियों में बासुदेव मैंजो तुझे उपदेश कर रहाहूं
और पाण्डवों में तूभी मेरी बिभूतिहै और मुनि अर्थात्
वेदार्थ मनन शीलों में वेदव्यास और कबियों में शुक्रा-
चार्य्य महींहूं ३७ शिक्षा करने वालों में दण्ड औरजय
इच्छा करनेवालों में नीति और गोपनीयों में मौन
और ज्ञानियों में ज्ञान महींहूं ३८ हे अर्जुन सम्पूर्ण
भूतोंका जो कारणहै सोमहींहूं क्योंकि विनाकारणकुछ
नहीं होसक्ता इस लिये चराचरका कारणमहींहूं ३९ ॥

नान्तोऽस्तिममदिव्यानांविभूतीनांपरन्तप ॥
एषतूद्देशतःप्रोक्तोविभूतेर्विस्तरोमया ४० यद्यद्वि
भूतिमत्सत्त्वंश्रीमदूर्जितमेववा॥तत्तदेवाऽवगच्छ
त्वंममतेजोंशसंभवम् ४१ अथवाबहुनैतेनकिं
ज्ञातेनतवार्जुन । । विष्टभ्याहमिदंकृत्स्नमेकांशेन
स्थितोजगत् ४२ ॥

इतिभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीता सूपनिषत्सुब्रह्म
विद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंबादेबिभू
तियोगोनामदशमोध्यायः १० ॥

हे परंतप अर्जुन मेरी दिव्य बिभूतियोंका अन्त नहीं संक्षेप में तुम्हारे हेतु इन सब विभूतियों का बिस्तार मैंने कहा ४० जो जो बिभूति तेज सम्पत्ति युक्त बस्तु बिस्तारसेहैं सोसो मेरे अंशसेउत्पन्न जानों ४१ हेअर्जुन इसअनेकप्रकारकेभेदज्ञानसेक्याहोगा क्योंकियहसम्पूर्ण बस्तु बिस्तारसेहैं सो मेरे अंशसे उत्पन्न जानों ४२ ॥

बिभूति योग निरूपण नाम दशवां अध्याय समाप्तहुआ ॥ १० ॥

अर्जुनउवाच ॥ मदनुग्रहायपरमंगुह्यमध्यात्मसंज्ञितम् ॥ यत्वयोक्तंवचस्तेन मोहोयंविगतो मम १ भवाप्ययोहिभूतानांश्रुतौविस्तरशोमया॥ त्वत्तःकमलपत्राक्षमाहात्म्यमपिचाव्ययम् २ एवमेतद्यथात्थत्वमात्मानंपरमेश्वर॥ द्रष्टुमिच्छामि तेरूपमैश्वरम्पुरुषोत्तम ३ ॥

अर्जुन प्रश्न करते हैं मेरे शोक निवृत्तिके हेतु गोपनीय परमार्थ तत्त्व अध्यात्म बिषयक जो वाक्य आपने कहा उससे मेरामोह नाशहुआ १ हेश्रीकृष्ण मैं नेभूतों की उत्पत्ति और नाश बारम्बार तुमसे सुना और तुम्हारा सृष्टि कर्तृत्वादि माहात्म्य जो अक्षय है सो भी सुना २ हे परमेश्वर जिस प्रकार से तुमने अपना स्वरूप बर्णन किया है सो तुम्हारा ईश्वर सम्बन्धी बिश्वरूप मैं देखने की इच्छा करता हूं ३ ॥

मन्यसेयदितच्छक्यंमयाद्रष्टुमितिप्रभो ॥ योगेश्वरततोमेत्वंदर्शयात्मानमव्ययम् ४ श्रीभगवानुवाच ॥ पश्यमेपार्थरूपाणिशतशोथसहस्रशः नानाविधानिदिव्यानिनानावर्णाकृतीनिच ५ पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौमरुतस्तथा॥ बहून्यदृष्टपूर्वाणिपश्याश्चार्य्याणिभारत ६ ॥

हे प्रभुयोगियों के ईश्वर यदि मैं तुम्हारे बिश्वरूप दर्शनके योग्यहौंतो तुमसनातन ईश्वर रूपको दिखाओ ४ भगवान् उत्तरदेते हैं हे पार्थ अर्जुन मेरे लाखोंप्रकार के रूप जो नानाबिधिके और दिव्य अनेक बरण आकृतियोंसे युक्त हैं तिन्हैं देखो ५ हे पार्थ अर्जुन बारहसूर्य और आठवसु और ग्यारह रुद्र औरदो अश्विनी देवतों को और उन्चासवायु और बहुतसे आश्चर्य कि जिन्हैं पहिले कभी न देखे तिन्हैं देखो ६ ॥

इहैकस्थंजगत्कृत्स्नंपश्याद्यसचराचरम्॥ममदेहेगुडाकेशयच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि ७नतुमांशक्यसेद्रष्टुमनेनैवस्वचक्षुषा ॥ दिव्यंददामितचक्षुःपश्यमेयोगमैश्वरम् ८ संजयउबाच ॥ एवमुक्त्वा ततोराजन्महायोगेश्वरोहरिः ॥ दर्शयामासपार्थायपरमंरूपमैश्वरम् ९ ॥

हे गुडाकेश अर्जुन मेरे शरीर में एकत्र स्थित चरा-

चर सहित सम्पूर्ण जगत् देखो इसके अनन्तर औरभी जो बस्तु देखने की इच्छा करोसो सब देखलो ७ तुम मुझको इन आंखोंसे न देखसकोगे इसलिये मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि देता हूं उस दृष्टिसे तुम मेरे बिश्वरूप योग को देखो ८ संजय धृतराष्ट्र से कहतेहैं कि हे राजायोगियों के ईश्वर श्री कृष्णचन्द्र अर्जुन से इस कहने के अनन्तर अपना उत्कृष्ट बिश्वरूप का दर्शन उन्हें दिखाते भये ९ ॥

अनेकबक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् ॥ अनेकदिव्याभरणंदिव्यानेकोद्यतायुधम् १० दिव्यमाल्याम्बरधरंदिव्यगंधानुलेपनम् ॥ सर्व्वाश्चर्य्यमयंदीप्तमनन्तंविश्वतोमुखम् ११ दिविसूर्यसहस्रस्यभवेद्युगपदुत्थिता ॥ यदिभाःसदृशीसास्याद्भासस्तस्यमहात्मनः १२ ॥

अनेक मुख और अनेक नेत्र और अनेक प्रकार के विचित्र दर्शन औरअनेक प्रकाशमान भूषणसेयुक्त और दिव्य अनेक शस्त्र धारण किये १० दिव्य माला और वस्त्रोंसे अलंकृत और दिव्यगन्धोंसे लिप्त और सम्पूर्ण आश्चर्यों से युक्त स्वतः प्रकाशमान सर्वत्र सुखवाला अनन्तरूप दिखाते भये ११ यदि आकाश में सहस्रों सूर्य्यों की प्रभा एकही समय उदयहोतो उस परमेश्वर की प्रभाके सदृश किंचित् हो १२ ॥

तत्रैकस्थंजगत्कृत्स्नंप्रविभक्तमनेकधा ॥अप श्यद्देवदेवस्यशरीरेपाण्डवस्तदा १३ततःसबिस्म याविष्टोहृष्टरोमाधनञ्जयः ॥ प्रणम्याशिरसादेवं कृताञ्जलिरभाषत १४ अर्जुनउवाच॥ पश्यामि देवांस्तवदेवदेहेसर्व्वांस्तथाभूतबिशेषसंघान् ॥ ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्चसर्व्वनुारगां श्चादिव्यान् १५ ॥

उस समय अर्जुन देवोंके देव श्रीकृष्ण के शरीर में संपूर्ण जगत् एकत्रस्थित यद्यपि रहा तथापि अनेक प्रकारके विभागसे देखताभया १३ इसके अनन्तरअर्जुन आश्चर्ययुक्त होकर रोमांच सहित श्रीकृष्णचन्द्र को दण्डवत् कर हाथ बांधके निवेदन करता भया १४ हे कृष्ण देव तुम्हारे शरीर में सम्पूर्ण देवतों को और भी जरायुजांडजादि प्राणी समूह को और कमलासनपर बैठे हुये ब्रह्मदेव महादेव औरसम्पूर्णऋषियों औरदिव्य वासुकी आदि नागोंको देखताहूं १५ ॥

अनेकबाहूदरबक्त्रनेत्रं पश्यामित्वांसर्व्वतोनंतरूपम् ॥ नांतन्नमध्यन्नपुनस्तवादिंपश्यामिविश्वेश्वरविश्वरूपम् १६ किरीटिनंगदिनंचक्रिणञ्चतेजोराशिंसर्वतोदीप्तिमन्तम् ॥ पश्यामित्वांदुर्निरीक्ष्यंसमन्ताद्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् १७ त्वम

क्षरंपरमंवेदितव्यंत्वमस्यविश्वस्यपरंनिधानम् ॥ त्वमव्ययःशाश्वतधर्म्मगोप्ता सनातनस्त्वंपुरुषो मतोमे १८ ॥

हे विश्वेश्वर श्रीकृष्ण तुम्हारे अनेक बाहु उदर औरमुख अनन्तरूप देखताहूं परन्तु तुम्हारे विश्वरूप का आदि अन्त और मध्य तीनों नहीं देखता १६ हे श्रीकृष्ण तुम्हें किरीट गदा चक्र धारण किये तेजकी खानि और सब प्रकाशमान देखताहूं और तुम प्राणी से जानने के योग्य नहीं अग्नि और सूर्यकी प्रकाशित प्रभा की नाईं दीप्त हौ इसलिये तुम कठिन से दिखलाई देते हौ १७ हे श्रीकृष्ण तुम अक्षय परम उत्कृष्ट और ज्ञानियों के जाननेके योग्य हौ और तुम्हीं इस जगत्के परमाश्रय और तीनों कालमें अव्यय और मनुआदि धर्मके पालन करनेवाले हौ इसलिये तुम अनादि पुरुष मुझे जानपड़ते हौ १८ ॥

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्य्यं मनन्तबाहुंशशिसूर्य्यनेत्रम् ॥ पश्यामित्वांदीप्तहुताशवक्त्रंस्वतेजसाविश्वमिदंतपन्तम् १६ द्यावापृथिव्योरिदमन्तरंहिव्याप्तंत्वयैकेनदिशश्चसर्वाः ॥ दृष्ट्वाद्भुतंरूपमुग्रंतवेदंलोकत्रयम्प्रव्यथितंमहात्मन् २० अमीहित्वांसुरसंघाविशन्ति केचिद्भीताःप्रांजल

योगृणंति ॥ स्वस्तीत्युक्कामहर्षिसिद्धसंघाःस्तुवन्तित्वांस्तुतिभिःपुष्कलाभिः २१॥

हे श्रीकृष्ण तुम आदि मध्य औरअंत रहितहौ और तुम्हारे पराक्रमका अंतनहीं औरतुमअनन्त बाहुहौऔर चन्द्र सूर्य तुम्हारे नेत्रहैं औरदीप्त अग्निकीनाईं तुम्हारा मुखहै और अपने तेजसे इसजगत्को संताप करते हौ १९ श्रीकृष्ण परमात्मा केवल तुम्हीं आकाश पृथ्वी और उनके मध्य और आठों दिशाओंमें व्याप्त हौ और तुम्हारा ऐसा उग्ररूप देखकर तीनोंलोक कम्पायमान हैं २० हे श्रीकृष्ण संपूर्ण देवता तुम्हारे शरणागत होते हैं और कोईभयसे हाथबांध अपनीरक्षा के हेतु तुम्हारा जयजयकारकरतेहैं औरसबमहाऋषि सिद्ध लोग स्वस्ति पढ़के अनेकप्रकारकी स्तुतिसे तुम्हारा स्तोत्रकरतेहैं २१॥

रुद्रादित्यावसवोयेचसाध्या विश्वेऽश्विनौमरुतश्चोष्मपाश्च॥गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसंघावीक्ष्यंतेत्वांविस्मिताश्चैवसर्व्वे २२ रूपंमहत्तेवहुवक्त्रनेत्रम्महाबाहोबहुबाहूरुपादम्॥ बहूदरंबहुदंष्ट्राकरालंदृष्ट्वालोकाःप्रव्यथितास्तथाहम् २३ नभःस्पृशंदीप्तमनेकवर्णं व्यात्ताननंदीप्तविशालनेत्रम् ॥ दृष्ट्वाहित्वांप्रव्यथितान्तरात्माधृतिंनविंदामिशमंचविष्णो २४ ॥

एकादशरुद्र द्वादशआदित्य आठोंबसुदोनोंअश्विनी-कुमार उनचास वायु पितृगण गन्धर्व असुर यक्ष और सिद्धादि आश्चर्य्ययुक्त हो तुमकोदेखते हैं २२ हे महा-बाहो श्रीकृष्ण तुम्हारा विशालरूप वहुत से मुखनेत्र बाहु पेट जंघा पाद और अनेक बडे बडेदांतोंसे कराल है जिसे लोग देखकर भयको प्राप्त भये और वैसाही मैंभी भयसे कंपायमान हूं २३ हे विष्णुतुम्हारा स्वरूप आकाश से छुये हुये प्रकाशवान् और अनेकवर्णसे युक्त है और खुलामुख बडे बड़े नेत्रोंसे प्रकाशित है सोउग्र देखकर मेरा मन संताप को प्राप्त भया और मुझ में धैर्य्य और शमहीन रहा २४ ॥

दंष्ट्राकरालानिचतेमुखानि दृष्ट्वैवकालानल सन्निभानि ॥ दिशोनजानेनलभेचशर्मप्रसीददे वेशजगन्निवास २५ अमीचत्वांधृतराष्ट्रस्यपुत्राः सर्वेसहैवावनिपालसंघैः ॥ भीष्मोद्रोणःसूतपुत्र स्तथासौ सहास्मदीयैरपियोधमुख्यैः २६ वक्त्रा णितेत्वरमाणाविशंति दंष्ट्राकरालानिभयानका नि ॥ केचिद्विलग्नादशनान्तरेषु संदृश्यन्तेचूर्णि तैरुत्तमांगैः २७॥

हे जगत् निवासी श्री कृष्ण तुम्हारे बड़े बड़े दांतोंसे भयानक मुख प्रलयकाल की अग्निके समान देखकर दिशा भूम हुआ और सुख विस्मरण हुआ इसलिये हे

देवेश मैं तुम्हारे शरणागत हूं मुझपर अनुग्रह करो २५ हे श्रीकृष्ण ये धृतराष्ट्र के पुत्र राजमंडली सहितभीष्म द्रोण और कर्ण हमारे योद्धों के साथ २६ तुम्हारेभयानक अति उग्र मुखमें शीघ्रता करतेहुये चले जाते हैं उनमेंसे कोई तुम्हारे दांतोंमें लटकेहुये और कोई फटे मस्तक से देख पड़ते हैं २७ ॥

यथानदीनांबहवोम्बुवेगाःसमुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति ।तथातवामीनरलोकवीराविशन्तिवक्त्राण्यभिविज्वलन्ति २८ यथाप्रदीप्तंज्वलनंपतंगाविशन्तिनाशाय समृद्धवेगाः । तथैवनाशाय विशन्तिलोकास्तवापिवक्त्राणिसमृद्धवेगाः २९ लेलिह्यसेग्रसमानः समन्ताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलद्भिः तेजोभिरापूर्य्यजगत्समग्रंभासस्तवोग्राःप्रतपंतिविष्णो ३० ॥

जैसे नदियों के जलका वेग सीधे समुद्रमें शीघ्रता से जाताहै वैसेही ये भीष्म द्रोण आदि राजालोग तुम्हारे प्रकाशित मुखमें चलेजाते हैं २८ जैसे जलती हुई अग्नि में पतंग बड़े बेगसे नाशकेहेतु जागिरते हैं वैसेही वेलोग नाशहोनेकेलिये तुम्हारे मुखमें वेगसे जातेहैं २९ हेविष्णु तुम अपने प्रज्वलित मुखमें चारों ओरसे सम्पूर्ण लोगोंको निगलते हुये खाते जाते हौ

और तुम्हारा प्रकाश अपने पराक्रमसे जगत्को घेरकर सन्ताप करता है ३० ॥

आख्याहिमेकोभवानुग्ररूपोनमोस्तुतेदेववरप्रसीद । विज्ञातुमिच्छामिभवन्तमाद्यंनहिप्रजानामितवप्रवृत्तिम् ३१ श्रीभगवानुवाच ॥ कालोस्मिलोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्त्तुमिहप्रवृत्तः । ऋतेऽपित्वांनभविष्यन्तिसर्व्वेयेऽवस्थिताःप्रत्यनीकेषुयोधाः ३२ तस्मा त्वमुत्तिष्ठयशोलभस्वजित्वाशत्रून्भुंक्ष्वराज्यंसमृद्धम् । मयैवैतेनिहताःपूर्व्वमेव निमित्तमात्रंभवसव्यसाचिन् ३३ ॥

अर्जुन कहतेहैं किहे देवताओंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्रजी आप प्रसन्न होके मुझसे यह कहिये किआपभयानक रूप कौन हैं आपके नमस्कार है यह मैं आदि पुरुष जोआपहैं तिनसे जानना चाहता हूं क्योंकि आप की प्रवृत्ति को नहीं जानताहूं ३१ तब भगवान् श्री कृष्णचन्द्रजी बोले किहे अर्जुन मैं संसारका नाशकरने वाला बढ़ाहुआ कालरूपहूं मनुष्यों के नाशकरने के लिये यहां प्रवृत्त हुआहूं पांचों पांडवों को छोड़ के और जितने शत्रुके व तुम्हारे योद्धाहैं ते कोई शेष न रहेंगे अर्थात् यहींपर सबका नाश होजायगा ३२ तिससे हे अर्जुन तुम उठो यशको प्राप्तहोवो और शत्रुओं को

जीत के ऐश्वर्य सहित राज्यको भोगकरो हम करके शत्रुजन पहिलेही से मानों नाश कियेहुये हैं तुमकेवल निमित्त मात्रही होगे और संहार तो सबको मैं हीं करूंगा ३३ ॥

द्रोणंचभीष्मंचजयद्रथंच कर्णन्तथान्यानपि योधवीरान् ॥ मयाहतांस्त्वंजहिमाव्यथिष्ठायुध्यस्वजेतासिरणेसपत्नान् ३४ संजयउवाच ॥ एतच्छ्रुत्वावचनंकेशवस्यकृतांजलिर्वेपमानःकिरीटी ॥ नमस्कृत्वाभूयएवाहकृष्णंसगद्गदंभीतभीतःप्रणम्य ३५ अर्जुनउवाच ॥ स्थानेहृषीकेशतवप्रकीर्त्याजगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यतेच । रक्षांसिभीतानिदिशोद्रवन्ति सर्वेनमस्यन्तिच सिद्धसंघाः ३६ ॥

द्रोणाचार्य्य, भीष्म जयद्रथ कर्णतथा और जेशत्रुओं में श्रेष्ठ २ योद्धा हैं ते हमीं करके नाशकिये हुये समझिये अर्थात् मैं अपनी कालदृष्टि से सबकी आयुक्षीण करदूंगा और तुमतो संग्राम में बैरियोंके जीतने वाले हो शोच छोड़के शत्रुओंसे युद्ध कीजिये ३४ संजय धृतराष्ट्रसे कहते हैं कि किरीटी अर्जुन कृष्णके वाक्य सुनकर हाथ जोड़कर कम्पायमान हो नमस्कारकर भयसे नम्रहो गद्गद वाणीसे कहा ३५ अर्जुन प्रश्न करते हैं हे श्रीकृष्ण तुम्हारे माहात्म्य के संकीर्तन से जगत्

सन्तोष और अनुराग को प्राप्त होताहै और राक्षस गण भयसे चारों ओर भागेजाते हैं और सिद्धों का समूह तुमको नमस्कार करता हैं सो यह युक्तही है ३६ ॥

कस्माच्चतेननमेरन्महात्मन्गरीयसेब्रह्मणो प्यादिकर्त्रे। अनन्तदेवेशजगन्निवासत्वमक्षरंस दसत्परंयत् ३७ त्वमादिदेवःपुरुषःपुराणस्त्वम स्यविश्वस्यपरंनिधानम्। वेत्तासिवेद्यंचपरंचधा मत्वयाततंविश्वमनन्तरूप ३८ वायुर्यमोग्निर्व रुणश्शशांकःप्रजापतिस्त्वंप्रपितामहश्च । न मोनमस्तेस्तुसहस्रकृत्वः पुनश्चभूयोपिनमोन मस्ते ३९ ॥

हेकृष्ण महात्मा सिद्धगण क्यों न तुमको नमस्कार करेंगे क्योंकि तुम ब्रह्माके गुरू और जनकभी हौ और तुमअनन्त औरदेवतोंकेईश और जगत्के निवासस्थान और अविनाशी हौ और व्यक्त अव्यक्त से परभी तुम्हीं हौ ३७ हे अनन्तरूप श्रीकृष्ण तुम्हीं देवतों के आदि और पुराण पुरुष और जगत्के आदिकारण और जान-ने वाले और जानने योग्य वस्तु और मोक्ष स्थान भी तुम्हीं हौ क्योंकि तुम्हीं सम्पूर्ण जगत् में व्याप्तहौ ३८ हे श्री कृष्ण तुम्हीं वायु यम अग्नि वरुण चन्द्र प्रजा-पति ब्रह्मा और ब्रह्माकेभी जनक हौ मैं सहस्रबार आप

कोनमस्कार कर और फिर फिर बारम्बार नमस्कार करताहूं ३९ ॥

नमःपुरस्तादथपृष्ठतस्तेनमोस्तुतेसर्वतएव सर्व । अनन्तवीर्य्यामितविक्रमस्त्वं सर्वंसमाप्नो षिततोसिसर्वः ४० सखेतिमत्वाप्रसभंयदुक्तंहे कृष्णहेयादवहेसखेति ॥ अजानतामहिमानंतवे दंमयाप्रमादात्प्रणयेनवापि ४१ यच्चावहासा र्थमसत्कृतोऽसिविहारशय्यासनभोजनेषु ॥ ए कोथवाप्यच्युततत्समक्षंतत्क्षामयेत्वामहमप्रमेय म् ४२ ॥

हे अमित पराक्रमी तुमको आगे पीछे और सर्वत्र नमस्कार करताहूं क्योंकि सर्वत्र सर्वरूपते तुम्हींहौ और तुम्हारी गतिका अन्तनहीं सर्वमें व्याप्त और सब से परभी तुम्हींहौ ४० तुमको मित्र जानकर हेश्रीकृष्ण हे यादव सखाकरके अमर्य्यादा वचन जो मैंने आपकी महिमा न जानकर कहाहै सो अविवेकता या प्रीति से कहा उसे क्षमा करना चाहिये ४१ हे श्रीकृष्ण और जो कुछ ठट्ठे या विहार या शयन या आसन या भोजन के समय एकान्त में या जनोंके सामने असत्कार मुझसे भयाहै उसके क्षमाकेलिये मैं आपसे हे अच्युत प्रार्थना करता हूं ४२ ॥

पितासिलोकस्यचराचरस्य त्वमस्यपूज्यश्च

गुरुर्गरीयान् ॥ नत्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकःकुतोऽन्योलोकत्रयेप्यप्रतिमप्रभावः ४३ तस्मात्प्रणम्यप्रणिधायकायंप्रसादयेत्वामहमीशमीड्यम् । पितेवपुत्रस्यसखेवसख्युः प्रियःप्रियायार्हसिदेवसोढुम् ४४ अदृष्टपूर्वंहृषितोस्मिदृष्ट्वाभयेनचप्रव्यथितंमनोमे। तदेवमेदर्शयदेवरूपंप्रसीददेवेशजगन्निवास ४५ ॥

इस चराचर लोकके आदि कारण और पूज्य गुरू और श्रेष्ठभी तुम्हीं हो क्योंकि तुम्हारे प्रभाव के सामने कोई नहीं इसलिये स्वर्ग मर्त्य पाताल तीनों लोक में तुम्हारे समान और तुमसे अधिक कोईनहीं ४३ इसलिये आपको नमस्कार करके प्रार्थना करताहूं क्योंकि आप स्तुतिके योग्य और ईश्वर हौ जैसे पिता पुत्रका और सखाअपने मित्रका और अपने प्रियका सहन करता है वैसेही आप हमारे अपराधको क्षमा कीजिये ४४ हे जगन्निवास पहिले जो विश्वरूप तुम्हारा कभी नहींदेखासो देखकर हर्षको प्राप्तभया अबमेरामन व्याकुलहै इसलिये पहिला रूप दिखावो और हेदेवेश मुझ परअनुग्रह करो ४५ ॥

किरीटिनंगदिनंचक्रहस्त मिच्छामित्वांद्रष्टुमहंतथैव ॥ तेनैवरूपेणचतुर्भुजेनसहस्रबाहोभव विश्वमूर्ते ४६ श्रीभगवानुवाच॥ मयाप्रसन्नेनत

वार्जुनेदंरूपंपरंदर्शितमात्मयोगात् ॥ तेजोमयं विश्वमनंतमाद्यं यन्मेत्वदन्येननदृष्टपूर्वम् ४७ नवेदयज्ञाध्ययनैर्नदानैर्न चक्रियाभिर्नतपोभिरुग्रैः॥ एवंरूपःशक्यअहंनृलोकेदृष्टुंत्वदन्येनकुरुप्रवीर ४८ ॥

किरीट गदा धारणकिये और चक्र हाथमें लिये हुये आपको देखा चाहताहूं वैसेही चतुर्भुज रूपसे युक्तहो क्योंकि आप सहस्रबाहु और विश्वमूर्ति हौ ४६ भगवान् कहते हैं हे अर्जुन हमारी प्रसन्नता और आत्मयोग से इस परम उत्कृष्ट रूपका तुमको दर्शन भया और यह रूप मेरा तेजमय विश्वस्वरूप कि जिसका आदि अन्त नहीं तुम्हारे व्यतिरिक्त दूसरे ने कभी नहीं देखा ४७ हे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन इस मनुष्य लोकमें वेदयज्ञ अध्ययन दान क्रिया और उग्रतपस्या आदिसे यह मेरा स्वरूप तुम्हारे व्यतिरिक्त दूसरेके देखनेके योग्यनहीं ४८ ॥

मातेऽव्यथामाचविमूढभावो दृष्ट्वारूपंघोरमीदृङ्ममेदम्॥ व्यपेतभीःप्रीतमनाःपुनस्त्वंतदेवमेरूपमिदम्प्रपश्य ४९ संजयउवाच ॥ इत्यर्जुनंवासुदेवस्तथोक्त्वास्वकंरूपंदर्शयामासभूयः ॥ आश्वासयामासचभीतमेनं भूत्वापुनःसौम्यवपुर्महात्मा ५० अर्जुनउवाच ॥ दृष्ट्वेदम्मानुषंरूपंतवसौ

म्यंजनार्दन ॥ इदानीमस्मिसंवृत्तः सचेताःप्रकृतिंगतः ५१ ॥

हे अर्जुन इसप्रकार का मेरा घोर स्वरूप देखकर व्यथा और मोहको मत प्राप्तहो और भयको त्यागकर स्वस्थ चित्तहो फिर तुममेरा पूर्वरूप अब देखो ४९ संजय धृतराष्ट्रसे कहते हैं कि इसप्रकार से श्रीकृष्ण बासुदेव कहकर अर्जुन को अपना पूर्वरूप दिखाते भये और भयमान अर्जुन को श्रीकृष्ण महात्मा शांतरूप धारण करके प्रेम पूर्वक समझाते भये ५० अर्जुन कहते हैं हे जनार्दन तुम्हारा यह सुन्दर भव्यरूप देखकर अब भयसे निवृत्तहो स्वस्थचित्त से अपने स्वभाव को प्राप्त भयाहूं ५१ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ सुदुर्दर्शमिदंरूपंदृष्टवानसियन्मम ॥ देवाअप्यस्यरूपस्यनित्यंदर्शनकांक्षिणः ५२ नाहंवेदैर्नतपसानदानेननचेज्यया ॥ शक्यएवंविधोदृष्टुंदृष्टवानसिमांयथा५३ भक्त्यात्वनन्ययाशक्यअहमेवंविधोऽर्जुन ॥ ज्ञातुंदृष्टुंचतत्त्वेनप्रवेष्टुंचपरन्तप ५४ ॥

भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन मेरा यह स्वरूपकष्ट से भी देखने के योग्यनहीं सो तुमने देखा और इस रूप को इन्द्रादि देवता लोगभी सर्बदा देखनेकी इच्छा करते हैं ५२ मैं चारोंवेद तपस्या दान और यज्ञादि से

इस प्रकारसे देखने के योग्य नहीं हूं कि जैसा तुमने मुझे देखा है ५३ हे परन्तप अर्जुन यह मेरा स्वरूप केवल एकाग्र भक्तिही से यथार्थ जानने देखने और अभेद ज्ञान से युक्त होनेके योग्य है और अन्य उपाय से नहीं ५४ ॥

मत्कर्मकृन्मत्परमोमद्भक्तःसंगवर्जितः॥ निर्वैरस्सर्वभूतेषुयस्समामेतिपाण्डव ५५ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्रसंहितायांवैयासिक्यांभीष्मपर्वणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेविश्वरूपदर्शनोनामएकादशोऽध्यायःसमाप्तः ११ ॥

हे पाण्डव अर्जुन जो मेरे हेतु कर्म करता है और मुझे परम उत्कृष्ट जानता है और रागादि से रहित होकर मेरी भक्ति करताहै और सम्पूर्ण भूतों से निर्बैर रहता है वही मुझको प्राप्तहोता है ५५ ॥

विश्वरूप दर्शन नामक ग्यारहवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ११ ॥

अर्जुनउवाच ॥ एवंसततयुक्तायेभक्तास्त्वांपर्युपासते ॥ येचाप्यक्षरमव्यक्तंतेषांकेयोगवित्तमाः १ श्रीभगवानुवाच ॥ मय्यावेश्यमनोजेमांनित्ययुक्ताउपासते ॥ श्रद्धयापरयोपेतास्तेमेयुक्ततमामताः २ येत्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तःपर्युपासते ॥ सर्वत्रगमचिन्त्यञ्चकूटस्थमचलन्ध्रुवम् ३॥

अर्जुन प्रश्न करते हैं हे श्रीकृष्ण जो लोग सर्बदा भक्ति मार्गके अनुसार तुम्हारी उपासना करते हैं और जो अबिनाशी निर्गुण परब्रह्म को ज्ञान मार्ग से उपासना करते हैं इन दोनों मेंसे श्रेष्ठ कौनहै १ भगवान् उत्तर देते हैं जो लोग मुझमें मन स्थिर करके उत्तम श्रद्धासे युक्त हो सर्बदा एकाग्र चित्तरह मेरी उपासना करते हैं वे मेरे मतके अनुसार अति उत्तमहैं २ जोलोग अबिनाशी और लक्षण प्रमाणसे जानने के योग्य और इन्द्रियोंसे अबिषय और अचिन्त्य और मायारूप प्रपंच में अधिष्ठान रूपसे स्थित और स्थिर ऐसे ब्रह्मकी उपासना करते हैं ३ ॥

सन्नियम्येन्द्रियग्रामंसर्वत्रसमबुद्धयः ॥ तेप्राप्नुवन्तिमामेवसर्वभूतहितेरताः ४ क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ॥ अव्यक्ताहिगतिर्दुःखंदेहवद्भिरवाप्यते ५ येतुसर्वाणिकर्माणिमयि

सन्यस्यमत्पराः ॥ अनन्येनैवयोगेनमांध्यायन्त उपासते ६ ॥

इन्द्रिय ग्रामको रोक कर सर्वत्र समबुद्धि रखकर सर्व भूतों का हित आचरण करते भये वे मुझमें प्राप्त होते हैं ४ परन्तु ज्ञान मार्ग वालोंको अव्यक्त रूप पर-ब्रह्ममें चित्त लगाने से क्लेश होताहै क्योंकि देहधारियों को निराकार को जाननायही दुःख है ५ जो लोग मेरे हेतु सम्पूर्ण कर्मोंको त्यागमुझीको परम पुरुषार्थ जान अद्वैत योगसे मुझे ध्यानकरतेहुये उपासनाकरते हैं६॥

तेषामहंसमुद्धर्त्तामृत्युसंसारसागरात् ॥ भवामिनचिरात्पार्थमय्यावेशितचेतसाम् ७ मय्येव मनआधत्स्वमयिबुद्धिन्निवेशय ॥ निवशिष्यसि मय्येवअतऊर्द्ध्वन्नसंशयः ८ अथचित्तंसमाधातुंनशक्नोषिमयिस्थिरम् ॥ अभ्यासयोगेनततो मामिच्छाप्तुन्धनञ्जय ९ ॥

हेपार्थ अर्जुन उनको मृत्यु रूपी संसारसे बहुत शीघ्र मैं पार करताहूं यदि वेलोग मुझीमें चित्तको एकाग्रता से स्थिर करें ७ हे अर्जुन संकल्प बिकल्प के आत्मक मन और व्यवसायात्मक बुद्धिको मुझमें स्थिरकरो तो मुझमें प्राप्त होगे इसमें कुछ संशय नहीं ८ हे धनंजय यदि मुझ में स्थिर चित्त निवेशन करसकै तो अभ्यास योग से मुझ में प्राप्त होनेके लिये प्रयत्न करो ९ ॥

अभ्यासेप्यसमर्थोसिमत्कर्मपरमोभव ॥ मद
र्थमपिकर्माणिकुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि १० अथै
तदप्यशक्तोसिकर्तुंमद्योगमाश्रितः ॥ सर्वकर्मक-
लत्यागंततःकुरुयतात्मवान् ११ श्रेयोहिज्ञान
मभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानंविशिष्यते ॥ ध्यानात्क
र्म्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् १२ ॥

यदि अभ्यास न करसको तो ब्रत आदिको मेरी
प्रीति के हेतु आचरण करो क्योंकि मेरी प्रीति के लिये
कर्म्म के आचरण से मोक्षको प्राप्त होगे १० यदि मेरी
अनुग्रह के हेतु कर्म्म भी न करसको तो सम्पूर्ण कर्म्म
ईश्वर अर्पण करके फल त्याग करो और नियमित
चित्त हो मेरी ही शरणआवो तो सिद्धिको प्राप्तहोगे ११
अभ्यास योगसे ज्ञान मंगलदायकहै और ज्ञानसे ध्यान
श्रेष्ठ और ध्यान से कर्म्म फल त्याग करना अति उत्तम
इसके अनन्तर संसार से शान्तिको प्राप्तहोताहै १२ ॥

अद्वेष्टासर्वभूतानांमैत्रःकरुणएवच ॥ निर्ममो
निरहंकारःसमदुःखसुखःक्षमी १३ संतुष्टःसततं
योगीयतात्मादृढनिश्चयः ॥ मय्यर्पितमनोबुद्धि
र्योमद्भक्तःसमेप्रियः १४ यस्मान्नोद्विजतेलोको
लोकान्नोद्विजतेचयः ॥ हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तोयः
सचमेप्रियः १५ ॥

सम्पूर्ण भूतों से द्वेष रहित हो मित्रता रक्खे और दीनोंपर दया और ममता और अहंकारसे रहितहो सुख दुःख को समान जाने और क्षमा शील हो १३ सर्बदा सन्तोष युक्त और योग युक्त रहै और चित्त एकाग्र दृढ़ निश्चय वाला हो बुद्धि और मन मुझमें अर्पण करै ऐसा मेरा भक्त मुझको प्रिय है १४ जिससे जनलोग भयको नहीं प्राप्तहोते और न जनोंसे वह भयको प्राप्त होता हर्ष असहन भय और चित्तकी व्याकुलता से जो परेहै वही मेरा भक्त है १५ ॥

अनपेक्षश्शुचिर्दक्षउदासीनोगतव्यथः ॥ सर्वा रम्भपरित्यागीयोमद्भक्तःसमेप्रियः १६ योनहृष्य तिनद्वेष्टिनशोचतिनकांक्षति ॥ शुभाशुभपरित्या गीभक्तिमान्यःसमेप्रियः १७समःशत्रौचमित्रेच तथामानापमानयोः ॥ शीतोष्णसुखदुःखेषुसमः संगविवर्जितः १८ ॥

अपेक्षा रहित पवित्र समर्थ उदासीन और पीड़ा रहित हो सम्पूर्ण प्रयत्न को त्याग करै सो मेरा अत्यन्त प्रियहै १६ जो जन हर्षको नहीं प्राप्तहोता और न किसी से द्वेष रखता न कुछ शोच करता न किसी की आशा रखता अशुभ शुभ फलको त्यागकरता भया मेरी भक्ति करताहै सो मेरा प्रियहै १७ शत्रुमित्र और मान अप-

मानको समान जान और शीत उष्ण और सुख दुःख में समता रख असंग है १८ ॥

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनीसंतुष्टोयेनकेनचित् ॥ अनिकेतःस्थिरमतिर्भक्तिमान्मेप्रियोनरः १९ये तुधर्म्मामृतमिदंयथोक्तंपर्युपासते ॥ श्रद्दधाना मत्परमाभक्तास्तेतीवमेप्रियाः २० ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्रसंहितायांवैया-
सिक्यांभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीतासूपनिष-
त्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन
संवादेभक्तियोगोनामद्वादशोऽ
ध्यायःसमाप्तः ॥ १२ ॥

निन्दा और स्तुति को समान जान प्रयोजनके अनुसार बरताकैर और जो प्राप्त हो उस्से संतुष्ट हो एकत्र निवासी न रहै और बुद्धिस्थिर रक्खै ऐसा भक्तिमान् पुरुष मुझे बहुत प्रियहै १९ हे अर्जुन यह धर्म्म रूप मोक्ष साधन उपाय जो अमृत तुल्य है जैसामैंने कहा उसी प्रकार से श्रद्धापूर्वक मुझको परम पुरुषार्थ जान के जो भक्ति से उपासना करते हैं वे मुझे अत्यन्त प्रियहैं २० ॥

भक्ति योग निरूपण नामक बारहवां
अध्याय समाप्त हुआ १२ ॥

अर्जुनउवाच ॥ प्रकृतिंपुरुषंचैवक्षेत्रंक्षेत्रज्ञ मेवच । एतद्वेदितुमिच्छामिज्ञानंज्ञेयञ्चकेशव १ श्रीभगवानुवाच ॥ इदंशरीरंकौन्तेयक्षेत्रमित्यभि धीयते ॥ एतद्योवेत्तितंप्राहुःक्षेत्रज्ञमितितद्विदः २ क्षेत्रज्ञंचापिमांविद्धिसर्व्वक्षेत्रेषुभारत ॥ क्षेत्रक्षेत्र ज्ञयोर्ज्ञानंयत्तज्ज्ञानंमतंमम ३ ॥

अर्जुन प्रश्नकरते हैं कि हे केशव प्रकृति पुरुष क्षेत्र क्षेत्रज्ञ ज्ञान और ज्ञेय इन्हें मैं जानना चाहताहूं सो कृपाकरकेकहो १ हे अर्जुन इस भोगस्थान शरीरकोक्षेत्र कहते हैं इसको जो यथार्थ करके जानता है उसको विवेकज्ञान वाले पुरुष क्षेत्रज्ञ कहते हैं २ हे भारत सम्पूर्ण क्षेत्रों में अनुगत क्षेत्रज्ञ मुझीको जानों क्षेत्र और क्षेत्रज्ञका ज्ञानमेराही ज्ञानहै जोमोक्षका हेतुहै ३ ॥

तत्क्षेत्रंयच्चयादृक्चयद्विकारियतश्चयत् ॥ स चयोयत्प्रभावश्च तत्समासेन मेशृणु ४ ऋषि भिर्बहुधागीतंछन्दोभिर्विविधैःपृथक् ॥ ब्रह्मसूत्रप दैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ५ महाभूतान्यहंका रो बुद्धिरव्यक्तमेवच ॥ इन्द्रियाणिदशैकंचपञ्च चेन्द्रियगोचराः ६ ॥

वह जो स्वरूप से जड़ और इच्छादि जिसको धर्म्म है और विकाररूप इन्द्रियों से युक्त और प्रकृति और

पुरुष के संयोगसे होता है सो क्षेत्र है और जो अचिंत्य ऐश्वर्य्य आदि प्रभावों से परिपूर्ण है सो क्षेत्रज्ञ है यह संक्षेप में मुझसे सुनो ४ वसिष्ठादि महाऋषियोंने योग शास्त्रों में और ध्यान धारण विषयरूप वैराग्यादि रूप में कहाहै और अनेक प्रकारके नित्य नैमित्तिक काम बिषयक वेद वाक्यों में यजनीय नाना देवतादि रूपसे प्रतिपादन कियाहै और ब्रह्मसूत्र अद्वैत प्रतिपादक वेदान्त वाक्यों से भी निरूपण किया है जो वाक्य युक्ति और पूर्व पक्ष सिद्धान्तोंसे निर्द्धारण किया गया है ५ पृथ्वी आदि पंचमहाभूत अहंकार बुद्धि और प्रकृति मिलकर आठ और उसमें ज्ञानइन्द्री और कर्म्म इन्द्री और मन मिलकर ग्यारह और पंचज्ञान इन्द्रियों के बिषय आदि सब मिलकर चौबीस तत्त्व हैं ६ ॥

इच्छाद्वेषःसुखंदुःखंसंघातश्चेतनाधृतिः ॥ एतत्क्षेत्रंसमासेनसविकारमुदाहृतम् ७ अमानित्वमदंभित्वमहिंसाक्षान्तिरार्जवम् ॥ आचार्य्योपासनंशौचंस्थैर्य्यमात्मविनिग्रहः ८ इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनोहंकारमेवच ॥ जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखंदोषानुदर्शनम् ९ ॥

इच्छा द्वेष सुख दुःख शरीर ज्ञानात्मिका मनोवृत्ति धैर्य्य इनशक्ति के समूहोंको बिकार सहित संक्षेपसे क्षेत्र कहाहै ७ अपना गुण बखान नकरे और कपटत्यागकरे

और दूसरेको पीड़ा न दे और क्षमाकरै औरसीधी मार्ग से चलै और गुरूकीसेवा कियाकरै औरबाह्य शौच और रागादि से रहित हो आन्तरिक शौच से पवित्ररहै और स्थिर हो मनको रोकेरहै ८ इन्द्रियों को विषय रागादि से विरक्तहो अहङ्कार त्यागदे जन्म मरण बुढ़ापा व्याधि और रागादिमें दुःख और दोष देखतारहै ९ ॥

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु ॥ नित्यञ्चसमचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु १० मयिचानन्ययोगेनभक्तिरव्यभिचारिणी ॥ विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ११ अध्यात्मज्ञाननित्यत्वंतत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् ॥ एतज्ज्ञानमितिप्रोक्तमज्ञानंयदतोऽन्यथा १२ ॥

पुत्र दारा गृहादिमें प्रीति त्यागकरना और उनके दुःखसे अपने में दुःख न आरोपकरना और इष्ट और अनिष्ट वस्तु की प्राप्तिसे सर्वदा समान रहै १० मेरी एकाग्र चित्तसे एकान्त में भक्तिकरै और जिस देश में चित्त प्रसन्नहो उसका आश्रयणकरै और मूर्खोंकी सभा में प्रीति न करै ११ अध्यात्म अर्थात् ईश्वर विषयक ज्ञानकी नित्य सेवनाकरै और तत्त्व ज्ञान अर्थात् जीव ईश्वरका अभेद ज्ञान और उसके प्रयोजन मोक्षकेहेतु सर्वदा यत्नकरता रहै अमानित्वादि से लेकर वे सब

प्रकारके ज्ञान साधन जो कहे हैं वही ज्ञान कहलाता है इसमें व्यतिरेक जो है सो अज्ञान है १२ ॥

ज्ञेयंयत्तत्प्रवक्ष्यामियज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ॥ अनादिमत्परम्ब्रह्मनसत्तन्नासदुच्यते १३ सर्वतःपाणिपादन्तत्सर्वतोक्षिशिरोमुखम् ॥ सर्वतःश्रुतिमल्लोकेसर्वमावृत्यतिष्ठति १४ सर्वेन्द्रियगुणाभासंसर्वेन्द्रियविवर्जितम् ॥ असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृच १५ ॥

ज्ञेयवस्तुको कहतेहैं कि जिसके जाननेसे पुरुषमोक्षको प्राप्तहोताहै और वह उत्पत्ति और नाश से रहित और निरतिशय परब्रह्म है और वह प्रमाणों से निषेध और विधिका बिषय नहीं १३ वह परब्रह्म हाथ पांव नेत्र और मुखसे सर्वत्र व्याप्त है और श्रोत्र इन्द्रियों से सर्वत्र युक्तहोकर जगत्को घेरेहुये स्थितहै १४ सम्पूर्ण चक्षुरादि इन्द्रियोंसे रूपादि गुणोंका प्रकाशक है और आप सब इन्द्रियोंसे रहित असंग और सम्पूर्ण जगत् का आधार है और सत्वादि गुणोंसे रहित और उनका भोक्ता और पालक है १५ ॥

बहिरन्तश्चभूतानामचरंचरमेवच । सूक्ष्मत्वातदविज्ञेयं दूरस्थंचांतकेचतत् १६ अविभक्तञ्चभूतेषुविभक्तमिवचास्थितम् ॥ भूतभर्तृचतज्ज्ञे

यंग्रसिष्णुप्रभविष्णुच १७ ज्योतिषामपितज्ज्योतिस्तमसःपरमुच्यते ॥ ज्ञानंज्ञेयंज्ञानगम्यं हृदिसर्वस्यधिष्ठितम् १८ ॥

बाह्य और अन्तर में सब भूतोंके वह परब्रह्म व्याप्त है और स्थावर और जंगमरूप वही है सूक्ष्महोनेसे वह जाना नहीं जाता और व्यवहार रूप प्रकृतिसे पर है परन्तु बिबेकियोंके निकट है १६ सम्पूर्ण भूतोंमें कारण रूपसे आप अभिन्न और कार्य्यरूपसे भिन्न की नाईं स्थितहै और चराचर भूतोंका पालक और प्रलय काल में नाशक और सृष्टिकालमें उत्पत्तिकर्ता भी आपहीहै १७ वह परब्रह्म प्रकाशकों का भी प्रकाशक है और अज्ञानरूपी अंधकार से परे ज्ञान और ज्ञेय और ज्ञान से प्राप्तकरने के योग्य और सम्पूर्ण प्राणियोंके हृदयमें नियन्ता होकर स्थित भी वही है १८ ॥

इतिक्षेत्रंतथाज्ञानं ज्ञेयंचोक्तंसमासतः ॥ मद्भक्तएतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते १९ प्रकृतिंपुरुषंचैवविद्ध्यनादीउभावपि ॥ विकारांश्चगुणांश्चैवविद्धिप्रकृतिसम्भवान् २० कार्य्यकारणकर्तृत्वेहेतुःप्रकृतिरुच्यते ॥ पुरुषःसुखदुःखनां भोक्तृत्वेहेतुरुच्यते २१ ॥

इसप्रकार से संक्षेपमें क्षेत्रज्ञान और ज्ञेय तत्त्व का लक्षण निरूपण किया मेराभक्त इसके जानने से ब्रह्म

भावको प्राप्तहोने के योग्य होता है १९ प्रकृति और पुरुष दोनोंको अनादि जानों और प्रकृति बिकार देह इन्द्रियादि और सुख दुःख आदि गुणको प्रकृति जन्य जानों २० देहादि कार्य और सुख दुःख आदि साधन इन्द्रियोंको तदाकार परिणाम होनेमें प्रकृति कारण कहलाती है वैसेही पुरुष सुख दुःख अनुभव करने में हेतु होता है २१ ॥

पुरुषःप्रकृतिस्थोहिभुंक्तेप्रकृतिजान्गुणान् ॥ कारणं गुणसंगोस्य सदसद्योनिजन्मसु २२ उप द्रष्टानुमन्ताच भर्त्ताभोक्ता महेश्वरः ॥ परमात्मे ति चाप्युक्तो देहेस्मिन्पुरुषःपरः २३ यएवंवेत्ति पुरुषं प्रकृतिंचगुणैस्सह ॥ सर्वथा वर्त्तमानोऽपि नसभूयोभिजायते २४ ॥

पुरुष प्रकृति के कार्य्य देहादि से युक्तहोकर प्रकृति जन्य सुख दुःख आदि गुणोंका अनुभव करता है इस लिये पुरुषके उत्तम और अधम योनिमें जन्म लेनेका कारण शुभ अशुभकारी इन्द्रियों का संग है २२ पुरुष प्रकृतिसे निकट होकर साक्षी की नाईं देखता और ग्रहण करता है और ईश्वर रूपसे भर्त्ता और भोक्ताभी है वही पुरुष इस देहमें परमात्मा भी कहलाता है २३ जो पुरुष इसप्रकार से पुरुषको और सुख दुःख आदि गुण सहित प्रकृति को जानता है वह यदि बिधि निषेध

की मर्य्यादा त्यागकर भी चलै तौभी जन्मादिसे रहित होकर मुक्त होता है २४ ॥

ध्यानेनात्मनिपश्यंति केचिदात्मानमात्मना॥ अन्येसांख्येनयोगेन कर्म्मयोगेनचापरे २५ अन्येत्वेवंनजानंतश्श्रुत्वान्येभ्य उपासते॥ तेपिचातितरंत्येव मृत्युंश्रुतिपरायणाः २६ यावत्सञ्जायते किञ्चित्सत्वंस्थावरजंगमम् ॥ क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धिभरतर्षभ २७ ॥

कोईतौ ध्यानयुक्तहो अपने शरीरमें परमेश्वरको मन से देखते हैं सांख्य योगवाले प्रकृति और पुरुष के भेद से जानते हैं और कर्म्मफल वाले अष्टांग योग आदिसे ईश्वर को देखते हैं २५ और मन्द बुद्धि वाले पुरुष जो पूर्वोक्त प्रकारों से नहीं जानसक्ते वे गुरू से ईश्वरका स्वरूप सुनकर उसपर निश्चय करने से संसाररूप मृत्यु से तरजाते हैं २६ हे अर्जुन जो कुछ चराचर आत्मक सत्व उत्पन्न होताहै सो सबप्रकृति और पुरुष के संयोग आरोप करने से होता है सो जानों २७ ॥

समंसर्वेषुभूतेषुतिष्ठन्तंपरमेश्वरम् ॥ विनश्यत्सुविनश्यन्तंयःपश्यतिसपश्यति २८ समंपश्यंहिसर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् ॥ नहिनस्त्यात्मनात्मानंततोयातिपरांगतिम् २९ प्रकृत्यैवच

कर्म्माणिक्रियमाणानि सर्वशः ॥ यःपश्यतितथा त्मानमकर्त्तारंसपश्यति ३० ॥

जो पुरुष चराचर आत्मक भूतों में परमेश्वर को समान व्याप्त जानता है और भूतोंके नाशहोनेसे ईश्वर को नाशरहित जानता है सो प्राप्ति योग्यवस्तु को भलीभांतिसे जानताहै २८ जोपुरुष परमेश्वरकोसर्वत्र समानरूप से स्थित देखता है और अपने देहादि के साथ उसेनष्ट नहीं देखता सो इसके अनन्तर मोक्षगति को प्राप्त होताहै २९ जो पुरुष सबप्रकारसे शुभ अशुभ कर्म्मों की कर्त्रीप्रकृतिको और अकर्त्ता आत्माको मानता है वहीपरमगति को जानता है ३० ॥

यदाभूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ॥ तत एवचविस्तारंब्रह्मसंपद्यतेतदा ३१ अनादित्वा न्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ॥ शरीरस्थोऽपि कौन्तेय नकरोतिनलिप्यते ३२ यथासर्वगतंसौ क्ष्म्यादाकाशंनोपलिप्यते ॥ सर्वत्रावस्थितोदेहे तथात्मानोपलिप्यते ३३ ॥

जब सम्पूर्ण भूतों में पृथग्भेद देखते हुये प्रलय के समय एक प्रकृति में सब को स्थित देखता है तिसके अनन्तर सृष्टि समय में सम्पूर्ण भूतोंका उसीसे विस्तार देखता है तब वहब्रह्म स्वरूप होजाताहै ३१ हे अर्जुन परमेश्वर अनादि और निर्गुण होने से नाशरहित है

यद्यपि सम्पूर्ण शरीरोंमें स्थित है तथापि आपकुछ नहीं करता और नकर्मफल से लिप्तहोता है ३२ जैसे आकाश सर्वत्र व्याप्त है परंतु असंग होनेसे किसी से लिप्त नहीं वैसेही यह आत्माभी संपूर्ण शरीर में व्याप्त है परंतु किसीसे लिप्तनहीं ३३ ॥

यथाप्रकाशयत्येकः कृत्स्नंलोकमिमंरविः ॥ क्षेत्रंक्षेत्रीतथाकृत्स्नं प्रकाशयतिभारत ३४ क्षेत्र क्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरंज्ञानचक्षुषा ॥ भूतप्रकृतिमोक्ष ञ्चयेविदुर्य्यान्तितेपरम् ३५ ॥

इतिश्रीमन्महाभारते शतसहस्र संहितायां
वैयासिक्यांभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीतासू
पनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृ
ष्णार्जुनसम्बादेक्षेत्रक्षेत्रज्ञनिर्देशो
नामत्रयोदशोऽध्यायः १३ ॥

हे अर्जुन जैसेसूर्य्य एक है और सम्पूर्णलोक को प्रकाश करता है वैसेही सम्पूर्ण क्षेत्र को क्षेत्री अर्थात् आत्मा प्रकाशकरताहै ३४ इसप्रकारसे क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के भेद को ज्ञानदृष्टि से जो देखता है और भूतों की प्रकृति और मोक्षकाउपाय ध्यानादिक जो जानताहै सो

माया से मुक्त होकर परम पद कोप्राप्त होता है ३५ ॥

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञस्वरूप निरूपण तेरहवां अध्याय
समाप्तहुआ १३ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ परंभूयःप्रवक्ष्यामिज्ञाना नांज्ञानमुत्तमम् ॥ यज्ज्ञात्वामुनयस्सर्वे परांसिद्धि मितोगताः १ इदंज्ञानमुपाश्रित्य ममसाधर्म्यमा गताः ॥ सर्गेपिनोपजायन्तेप्रलयेनव्यथन्तिच २ ममयोनिर्महद्ब्रह्मतस्मिन्गर्भंदधाम्यहम् ॥ सं भवस्सर्वभूतानां ततोभवतिभारत ३ ॥

भगवान् कहते हैं हे अर्जुन फिर मैं तुमसे कहताहूं कि तप कर्म्मादि से ज्ञान उत्तमहै और सम्पूर्ण ऋषि लोग जिसको जाननेसे इससंसार में मुक्तहोकर परम मोक्ष सिद्धिको प्राप्तभये हैं १ इसज्ञान को प्राप्तहोकर मेरेस्वरूप में लय होजाते हैं इसलिये फिर न सृष्टिमें उत्पन्न होतेहैं और न प्रलयमें नाशको प्राप्तहोते हैं २ यहकार्य्य ब्रह्म मेरी प्रकृति है सोई योनि है इसमें मैं उत्पादक शक्तिको धारण करता हूं उससे अर्जुन सम्पूर्ण भूतोंको उत्पत्ति होती है ३ ॥

सर्वयोनिषुकौन्तेयमूर्त्तयःसंभवन्तियाः॥तासा म्ब्रह्ममहद्योनिरहंबीजप्रदःपिता ४ सत्त्वंरजस्त

मइतिगुणाःप्रकृतिसम्भवाः ॥ निबध्नंतिमहाबाहो देहेदेहिनमव्ययनम् ५ तत्रसत्वंनिर्मलत्वात्प्रका शकमनामयम् ॥सुखसङ्गेनबध्नाति ज्ञानसंगेन चानघ ६ ॥

हे अर्जुन सम्पूर्ण योनियोंमें जो मूर्तियां उत्पन्नहोती हैं ब्रह्मा उनकी महद्योनिहै औरमैं बीज देनेवाला पिता हूं ४ हे महाबाहो सत्त्व रज और तम तीनों गुण प्रकृति से उत्पन्न होतेहैं और देहमें इस अविनाशीहीको बंधन करते हैं ५ हे अनघ अर्जुन इन तीनों गुणोंमें से सत्त्व गुण निर्मल होनेसे प्रकाशक और निरुपद्रवहै इसलिये अपने कार्य्य सुख और ज्ञानदोनोंके संगसे बंधन करता है अर्थात् क्षेत्रऔर क्षेत्रज्ञका संयोग प्रकाश करताहै ६ ॥

रजोरागात्मकंविद्धितृष्णासंगसमुद्भवम् ॥ तन्निबध्नातिकौन्तेय कर्मसंगेनदेहिनम् ७ तमस्त्वज्ञानजंविद्धि मोहनंसर्वदेहिनाम् ॥ प्रमा दालस्यनिद्राभिस्तान्निबध्नाति भारत ८ सत्त्वंसु खेसञ्जयति रजःकर्म्मणिभारत ॥ ज्ञानमावृत्य तुतमः प्रमादेसञ्जयत्युत ९ ॥

हे अर्जुन रजोगुणको रागात्मकजानो वहतृष्णा और संगसे उत्पन्नहै और इष्ट अनिष्ट कर्मों में आशा होने से क्षेत्रज्ञ का बंधन करता है ७ हे अर्जुन तम अज्ञान

से उत्पन्न है और सम्पूर्ण प्राणियों को भ्रांति ज्ञान उत्पन्न करताहै प्रमाद आलस्य और निद्रा से क्षेत्रज्ञ को बांधता है ८ सत्त्वगुण देही को सुख प्राप्त करता है और रजोगुण कर्म्म में प्रवृत्ति करता है और तमोगुण ज्ञानको घेरकर प्रमादादि से युक्त करता है ९ ॥

रजस्तमश्चाभिभूयस्सत्त्वंभवतिभारत॥रजस्सत्त्वंतमश्चैव तमःसत्त्वंरजस्तथा १० सर्वद्वारेषुदेहेस्मिन्प्रकाशउपजायते ॥ ज्ञानंयदातदाविद्याद्विवृद्धंसत्त्वमित्युत ११ लोभःप्रवृत्तिरारंभः कर्म्मणामशमःस्पृहा ॥ रजस्येतानिजायन्तेविवृद्धेभरतर्षभ १२ ॥

हे भारत रजतम दोनों तिरस्कार करके सत्त्वगुण देहीको सुखादि से युक्त करता है और रजोगुण सत्त्व और तम इन दोनों को दबाकर देही को रागादि में युक्त करता है वैसेही तम सत्त्व और रज दोनों को दूरकर के प्राणियोंको प्रमादादि में प्रवृत्तिकरता है १० श्रोत्रादि सब द्वारों में जब शब्दादि का ज्ञान प्रकाश होता है तब उसमें सत्त्वकी वृद्धि और सुख आदि का अनुभव जानो ११ लोभ प्रवृत्ति नाना कर्म्मोंके आरम्भ अनेक संकल्प विकल्पका होना और इच्छादि रजोगुण की वृद्धिसे उत्पन्न होतेहैं १२ ॥

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादोमोहएवच ॥

तमस्येतानिजायंते विवृद्धेकुरुनन्दन १३ यदा सत्त्वेप्रवृद्धेतुप्रलयंयातिदेहिभृत् ॥ तदोत्तमवि दांल्लोकानमलान्प्रतिपद्यते १४ रजसिप्रलयं गत्वाकर्म्मसंगिषुजायते ॥ तथाप्रलीनस्तमसि मूढ़योनिषुजायते १५ ॥

हे अर्जुन विवेक नाशऔर अनुद्योग कर्त्तव्य अर्थका त्याग और मोहादिये तमोगुणकी वृद्धि से उत्पन्नहोते हैं १३ जबसत्त्वगुण अधिकहोताहै तब देहीप्रलय अर्थात् मृत्यु होनेपर उत्तम ज्ञानियोंके निर्मल लोकमें प्राप्त होता है १४ रजोगुणकी अधिकतामें मृत मनुष्य योनि में प्राप्त होताहै वैसेही तमोगुण की वृद्धि में मृत मूढ़ अर्थात् पशु योनिको प्राप्त होता है १५ ॥

कर्म्मणः सुकृतस्याहुः सात्विकं निर्मलंफलम् ॥ रजसस्तुफलंदुःखमज्ञानन्तमसःफलम् १६ सत्त्वात्सञ्जायतेज्ञानं रजसोलोभएवच ॥ प्रमादमोहौतमसो भवतोऽज्ञानमेवच १७ ऊर्ध्वंगच्छन्तिसत्त्वस्था मध्येतिष्ठंतिराजसाः ॥ जघन्यगुणवृत्तिस्थाअधोगच्छंति तामसाः १८ ॥

पुण्य कर्म्मकासत्त्व प्रधान निर्मलज्ञान फल और रजोगुण का फलदुःख और तमोगुण का फलअज्ञान है १६ सत्त्वगुणसे ज्ञान उत्पन्न होताहै और रजोगुणसे

लोभ औरतमसे प्रमाद मोह और अज्ञान तीनों उत्पन्न होते हैं १७ सात्विक गुणवाले हिरण्यगर्भ लोकको प्राप्त होतेहैं और रजोगुण वाले दुःख भोगतेहुये मृत्युलोक में रहते हैं और तमोगुण वाले निकृष्ट योनि में प्राप्त होके नरक में जाते हैं १८ ॥

नान्यंगुणेभ्यःकर्त्तारं यदाद्रष्टानुपश्यति ॥ गुणेभ्यश्चपरंवेत्ति मद्भावंसोऽधिगच्छति १९ गुणानेतानतीत्यत्रीन्देहीदेहसमुद्भवान् ॥ जन्म मृत्युजरादुःखैर्विमुक्तो मृतमश्नुते २० अर्जुनउवाच॥कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतोभवतिप्रभो॥ किमाचरः कथंचैतां स्त्रीन्गुणानतिवर्त्तते २१ ॥

जब विवेकी पुरुष सत्त्वादिगुणोंसे कर्त्ता को अतिरिक्त नहीं देखता तो गुणही को कर्त्ता जानकर उनसे परसाक्षी को जानता है तब वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है १९ देही इनदेह उत्पन्न सत्त्वादितीनों गुणोंको अतिक्रमणकरके जन्ममरण और वृद्धअवस्थादि दुःखों से मुक्तहो ब्रह्मानन्द को प्राप्त होता है २० अर्जुन प्रश्न करते हैं कि हे प्रभो श्रीकृष्ण किनकिन चिह्नोंसे देही इनतीनों गुणोंसे अतिक्रमण हुआ मालूम होताहै और किस आचारसे युक्तहोकर इनगुणोंके परहोरहताहै२१ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ प्रकाशंचप्रवृत्तिञ्च मोहमेवचपाण्डव ॥ नद्वेष्टिसम्प्रवृत्तानि ननिवृ

त्तानिकांक्षति २२ उदासीनवदासीनो गुणैर्योन विचाल्यते ॥ गुणावर्त्ततइत्येवं योवतिष्ठतिनेङ्ग ते २३ समदुःखसुखस्स्वस्थः समलोष्टाश्म कांचनः ॥ तुल्यप्रियाप्रियोधीरस्तुल्यनिंदात्म संस्तुतिः २४ ॥

भगवान् उत्तर देतेहैं कि हे पाण्डव सत्त्व गुण का कार्य्य प्रकाश और रज का कार्य्य प्रवृत्ति और तम का कार्य्य मोह तीनों स्वभाव से प्रवृत्त हैं उनमें जो दुःख बुद्धि से द्वेष न रक्खै और निवृत्ति में इच्छा करै सो गुणातीत है २२ जो पुरुष उदासीनकी नाईं गुणों से अकम्पायमान होकर स्थिर रहता है और उनको स्वभाव से वर्त्तमान जानकर स्थिर होताहै सो गुणातीत कहलाता है २३ जो पुरुष सुख और दुःखको समान जानता है और स्वस्थ मन रहता है और सोने को पत्थर और लोहे को समान देखता है और प्रिय और अप्रिय दोनों उसके निकट समान हैं और निन्दा और स्तुति को तुल्य गिनता है सो गुणातीत है २४ ॥

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्योमित्रारिपक्षयोः ॥ सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतःसउच्यते २५ मां चयोऽव्यभिचारेण भक्तियोगेनसेवते ॥ सगुणां समतीत्यैतान्ब्रह्मभुयायकल्पते २६ ब्रह्मणोहि

प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्यच ॥ शाश्वतस्यच धर्म्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्यच २७ ॥

इतिश्रीमन्महाभारते शतसहस्रसंहितायांवै यासिक्यांभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीतासूप निषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णा र्जुनसंवादे प्रकृतिगुणत्रयविभागयो गोनामचतुर्दशोऽध्यायः १४ ॥

मान अपमान जिसके समान तुल्य हैं और मित्र और शत्रु दोनों पक्ष को समान जानता है और सम्पूर्ण उद्योग को त्याग करता है सो भी गुणातीत कहलाता है २५ जो पुरुष मुझको एकाग्र भक्तियों से सेवन करता है सो इन गुणों से पार होके मोक्षको प्राप्त होनेके योग्य होताहै २६ मैं मोक्षरूप अविनाशी सनातन अनादि धर्म्मरूप और निरतिशयसुख स्वरूप परब्रह्मकी प्रतिमाहूं जैसे प्रकाशका पुञ्ज सूर्य्य है २७ ॥

प्रकृतिगुणादि भेद निरूपण चौदहवां अध्याय समाप्तहुआ

श्रीभगवानुवाच॥ऊर्द्ध्वमूलमधःशाखामश्व त्थंप्राहुरव्ययम् ॥ छन्दांसियस्यपर्णानियस्तं

वेदसवेदवित् १ अधश्चोर्ध्वंप्रसृतास्तस्यशा खागुणप्रवृद्धाविषयप्रवालाः ॥ अधश्चमूलान्य नुसन्ततानि कर्म्मानुबंधीनिमनुष्यलोके २ न रूपमस्येहतथोपलभ्यतेनांतो नचादिर्नचसम्प्र तिष्ठा ॥ अश्वत्थमेनंसुविरूढ़मूल मसंगशस्त्रेण दृढ़ेनछित्त्वा ३ ॥

भगवान् कहतेहैं यहसंसाररूपी पीपरका वृक्षजिस-की जडऊर्ध्वकहैउत्पत्ति औरनाशरहित ऐसा पुरुषोत्तम है और अधः हिरण्यगर्भादि जिसकी शाखा हैं प्रबाह रूप करके अनादि है और उसके पत्ते वेद प्रतिपाद्य कर्म्मफल आदि हैं इसप्रकार से जो इससंसार रूपी पी-पर को जानता है सो वेदार्थ जाननेवाला है १ दुष्कृति लोग पशु आदि योनिमें प्राप्त होके शाखादि रूप से नीचे व्याप्त हैं और सुकृती लोग देवादि योनि में प्राप्त होके शाखादि रूपसेऊपर फैलेहैं और वे शाखा सत्त्वादि गुणों से वृद्धि को प्राप्त भई हैं उसके अंकुर रूपादि बिषय हैं इस मनुष्य लोक में कर्म्म अनुसार इसकी जड नीचे ऊपर व्याप्त है २ इस जगत् में संसार रूपी पीपर का ऊपर मूलनीचे शाखादिरूप नहीं देख पडता वैसेही अन्तआदि और स्थितभीनहीं जान पड़ती इसप्रबल मूलपीपर असंग रूप शस्त्रसे छेदके ३ ॥

ततःपदंतत्परिमार्गितव्यं यस्मिंगतानानिव

र्त्तंतिभूयः ॥ तमेवचाद्यंपुरुषंप्रपद्ये यतःप्रवृत्ति
प्रसृतापुराणी ४ निर्मानमोहाजितसंगदोषा अ
ध्यात्मनित्याविनिवृत्तकामाः ॥ द्वंद्वैर्विमुक्ताःसुख
दुःखसंज्ञैर्गच्छंत्यमूढाःपदमव्ययंतत् ५ नतद्भा
सयतेसूर्य्योनशशांकोनपावकः ॥ यद्गत्वाननिवर्त्त
तेतद्धामपरमम्मम ६ ॥

तिसके अनन्तर उस अनादि पुरुषके मैं शरणागत हूं इसबिधि उसप्राप्य परम बस्तुकी प्राप्तिके लिये उद्योगकरैं और वह ऐसी बस्तु ऊपरहै जिसमें लय होकर फिरजन्म को नहीं प्राप्तहोता क्योंकिइसअनादि संसारकी प्रवृत्ति अनेकप्रकार से फैलीहै ४ अभिमान और मोहसे रहित रागादि दोषके जीतने वाले सर्वदा आत्मज्ञान में तत्पर कामादि से निवृत्त सुख दुःख शीतोष्ण दोनोंको समान जाननेवाले विवेकी पुरुष अविनाशी मोक्षपद को प्राप्तहोते हैं ५ सूर्य्य चन्द्र और अग्नि जिसको नहीं प्रकाश करसक्के जिसको योगीलोग प्राप्तहोके फिर नहीं फिरते सो उत्कृष्टधाम मेराहै ६ ॥

ममैवांशोजीवलोके जीवभूतःसनातनः ॥
मनःषष्ठानींद्रियाणिप्रकृतिस्थानिकर्षति ७ श
रीरंयदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः । गृहीत्वै
तानिसंयाति वायुर्गंधानिवाशयात् ८ श्रोत्रंच

क्षुःस्पर्शनञ्च रसनंघ्राणमेवच ॥ अधिष्ठायमन श्चायं विषयानुपसेवते ६ ॥

यहअनादि जीवस्वरूपमें स्थितमेराही अंशहै तथापि संसार में भोगके हेतु मन आदि छः इन्द्रियां प्रकृति में स्थित रहकर जीवको अपने अपने बिषयके ओर आकर्षण करती हैं ७ देही एक देह को त्यागकर जबदूसरे में प्राप्तहोता है तो इन्द्रियों को अपने साथ लेजाताहै जैसे बायु फूल से गन्ध दूसरी जगह लेजाताहै ८ कान आंख त्वक् जिह्वा नाक और मन छओं इन्द्रियों को आश्रयण करके यह जीव रूपादि बिषयों का अनुभव करता है ९ ॥

उत्क्रामंतंस्थितंवापि भुञ्जानंवागुणान्वितम् ॥ विमूढानानुपश्यंतिपश्यंतिज्ञानचक्षुषः १० यतंतोयोगिनश्चैनं पश्यंत्यात्मन्यवस्थितम् ॥ यतंतोप्यकृतात्मानो नैनंपश्यंत्यचेतसः ११ यदादित्यगतंतेजो जगद्भासयतेखिलं ॥ यच्चंद्रमसियच्चाग्नौ तत्तेजोविद्धिमामकम् १२ ॥

मूर्ख लोग जीव को एकशरीर के त्याग और दूसरे के आश्रयणकरनेके विषयोंकोअनुभव करनेऔरइन्द्रियों के साथरहने को नहीं देखसक्ते परंतु बिवेकी लोग उसे ज्ञान चक्षुसे देखते हैं १० योगी लोग योगाभ्यास से प्रयत्न करते भये देहमें स्थित आत्माको देखते हैं और

अविवेकी लोग प्रयत्न करते हुये भी आत्मा को नहीं देखसक्के क्योंकि वे विवेक ज्ञान से रहितहैं ११ जो तेज सूर्य्य चन्द्र और अग्नि में स्थित होकर संपूर्ण जगत् का प्रकाश करता है वह तेज मेरा जानो १२ ॥

गामाविश्यचभूतानि धारयाम्यहमोजसा ॥ पुष्णामिचौषधीःसर्वाःसोमोभूत्वारसात्मकः १३ अहंवैश्वानरोभूत्वा प्राणिनांदेहमाश्रितः ॥ प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नञ्चतुर्विधम् १४ सर्वस्यचाहंहृदिसन्निविष्टो मत्तस्स्मृतिर्ज्ञानमपोहनञ्च ॥ वेदैश्चसर्वैरहमेववेद्यो वेदांतकृद्वेदविदेवचाहम् १५ ॥

मैं पृथ्वी में स्थितहोके अपने पराक्रम से चराचर आत्मक भूतों को धारण करताहूं और रस स्वरूप चन्द्र होके सम्पूर्ण औषधी लताओंको पोषण करताहूं १३ मैं जठराग्नि होकर प्राणियों के देहमें स्थितहो प्राणअपान दोनों बायुओं से मिलकर भक्ष्य भोज्य लेह्य चोष्य चारों प्रकार के अन्नों को पाचन करताहूं १४ सम्पूर्ण प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामी रूपसे स्थित होकर व्यतीत बस्तुको स्मरण और पदार्थ ज्ञान और उनका बिस्मरण महीं करताहूं और चारोंवेदों से उनके देवता रूप में उपास्य हूं और बेदान्त सम्प्रदायका चलाने वाला और वेदजानने वाला भी महींहूं १५ ॥

द्वाविमौपुरुषौलोके क्षरश्चाक्षरएवच ॥ क्षरः सर्वाणिभूतानि कूटस्थोक्षरउच्यते १६ उत्तमः पुरुषस्त्वन्यापरमात्मेत्युदाहृतः ॥ योलोकत्रयमाविश्य विभर्त्यव्ययईश्वरः १७ यस्मात्क्षरमतीतोहमक्षरादपिचोत्तमः॥ अतोऽस्मिलोकेवेदेचप्रथितःपुरुषोत्तमः १८ ॥

इस जगत् में यहदोपुरुष क्षर और अक्षर कहलाते हैं उनदोनों मेंसे सम्पूर्ण भूतक्षर हैं और मायाआश्रित परमेश्वर अक्षरहैं १६ इनदोनों मेंसे भिन्न पुरुषोत्तम परमात्मा कहलाताहै जो तीनों लोक में व्याप्त होकर अविनाशी ईश्वर रूपसे पालन करता है १७ जिस कारण से नाशरहित और अक्षर से श्रेष्ठहै उसी कारण से लोक और वेदमें भी पुरुषोत्तम कहलाता है १८ ॥

योमामेवमसंमूढोजानातिपुरुषोत्तमम् ॥ ससर्वविद्भजतिमांसर्वभावेनभारत १९ एतद्गुह्यतमंशास्त्रमिदमुक्तंमयानघ ॥ इतिबुध्वाबुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्चभारत २० ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्रसंहितायांवैयासिक्यांभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसम्वादेपुरुषोत्तमप्राप्तियोगोनामपंचदशोऽध्यायः १५॥

जो मोह रहित होकर मुझको इसप्रकार से पुरुषो-त्तम जानता है सो सर्बज्ञ है वही अनन्य हो मुझको भजन करता है १९ हे अर्जुन, अतिगोपनीय शास्त्रजो मैंने निरूपण किया उसे इसप्रकार जानकर बिबेकी पुरुषकृतकृत्य होते हैं २० ॥

पुराण पुरुषोत्तम निरूपण पन्द्रहवां अध्याय
समाप्त हुआ १५ ॥

श्रीभगवानुवाच॥अभयंसत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयो गव्यवस्थितिः॥दानंदमश्चयज्ञश्चस्वाध्यायस्त पआर्जवम् १ अहिंसासत्यमक्रोधस्त्यागःशांतिर पैशुनम्॥दयाभूतेषुलोलुत्वमार्द्दवंह्रीरचापलम् २ तेजःक्षमाधृतिःशौचमद्रोहोनातिमानिता ॥ भवं तिसंपदंदैवीमभिजातस्यभारत ३ ॥

भगवान् कहते हैं सम्पूर्ण प्राणियों से निर्भय और सतोगुण प्रधान होकर ज्ञान अभ्यास में रतरहै यथा-शक्ति ज्ञान इन्द्रिय निग्रह यज्ञ वेदाध्ययन तप और निष्कपट व्यवहारकरै १ हिंसा रहित सत्यबादी और क्रोध रहितहो रागादिको त्यागकरै और परनिन्दा न करै और भूतों परदया रक्खै और किसी के नाशकरने में प्रवृत्तनहो और कोमल स्वभावरहै और निंदित कर्म करने से लज्जित हो और स्थिरस्वभाव रक्खै २ हे

भारत अर्जुन तेज क्षमा धैर्य्य पवित्रता निर्दोह और निरभिमानादि गुण दैवी सम्पत्ति में जो उत्पन्न पुरुष तिसमें होते हैं ३ ॥

दंभोदर्पोभिमानश्चक्रोधःपारुष्यमेवच ॥ अज्ञानंचाभिजातस्य पार्थसम्पदमासुरीम् ४ दैवीसम्पद्विमोक्षाय निबंधायासुरीमता ॥ माशुचः सम्पदंदैवीमाभिजातोसिपाण्डव ५ द्वौभूतसर्गौ लोकेस्मिन्दैवआसुरएवच ॥ दैवोविस्तरतःप्रोक्त आसुरंपार्थमेशृणु ६ ॥

हे पार्थ अर्जुन दंभ दर्प अभिमानक्रोध कठोरभाषण और अज्ञानादि आसुरी सम्पत्ति से जो उत्पन्न पुरुष तिसमें होते हैं ४ हे पाण्डव दैवी संपदमुक्ति के हेतु है और आसुरी सम्पद बन्धन का कारण परंतु तुम दैवी संपद से उत्पन्न भये हो इसलिये शोक न करो ५ हे अर्जुन इसलोक में भूतोंकी उत्पत्ति दैव और आसुरी भेदसे दो प्रकारकी कहीहै और दैवउत्पत्तिका निरूपण बहु प्रकार से करचुका अबआसुरी का निरूपण करता हूं सो सुनो ६ ॥

प्रवृत्तिञ्चनिवृत्तिञ्च जनानविदुरासुराः ॥ न शौचंनापिचाचारो नसत्यंतेषुविद्यते ७ असत्य मप्रातिष्ठंते जगदाहुरनीश्वरम् ॥ अपरस्परसम्भू

तंकिमन्यत्कामहेतुकम् ८ एतान्दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ॥ प्रभवंत्युग्रकर्माणः क्षयायजगतोहिताः ९ ॥

आसुर अंशवाले मनुष्य धर्म्ममें प्रवृत्तिऔर अधर्म्म से निवृत्ति नहीं जानते इसलिये उनमें शौच आचार और सत्यभी नहीं ७ आसुरी अंशवाले जगत्को असत्य निराश्रय और निरीश्वर कहते हैं और इसकी उत्पत्ति केवल स्त्री पुरुष के संयोगही से जानतेहैं इससे अतिरिक्त उत्पादक हेतु किसीको नहीं समझते ८ वेलोग इसनास्तिक दृष्टिका आश्रयण करके अपने निषिद्ध कर्म्माचरण से जगत् के नाशके हेतु आसक्त होते हैं क्योंकि वे अल्पबुद्धि वाले और अविवेकी हैं ९ ॥

काममाश्रित्यदुःपूरं दम्भमानमदान्विताः ॥ मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्त्ततेशुचिव्रताः १० चिंतामपरिमेयाञ्च प्रलयांतामुपाश्रिताः ॥ कामोपभोगपरमा एतावदितिनिश्चिताः ११ आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः ॥ ईहंते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् १२ ॥

वे अतृप्त काम का आश्रयण करके दम्भ अभिमान और मद से युक्त होके अपनी अविवेकता से निन्दित कर्म्मका आचरणकरके अपवित्र वृत्तिमें प्रवृत्तहोतेहैं १०

निरवधि चिन्ता कि जिसकी समाप्ति प्रलयही है उसके आश्रयण होकर केवल काम भोगही को परम पुरुषार्थ जान उस पर निश्चय करते हैं ११ अनेक प्रकार की आशाकी रस्सीमें बद्ध और सर्बदा कर्म्म क्रोध में अनुरक्त हैं और काम भोग के अर्थ अन्याय से द्रव्य संचय की इच्छा करते हैं १२ ॥

इदमद्यमयालब्धमिमंप्राप्स्येमनोरथम् ॥ इदमस्तीदमपिमे भविष्यतिपुनर्द्धनम् १३ असौ मयाहतःशत्रुर्हनिष्येचापरानपि ॥ ईश्वरोहमहं भोगी सिद्धोहंबलवान्सुखी १४ आढ्योभिजन वानस्मि कोन्योस्तिसदृशोमया ॥ यक्ष्येदास्या मिमोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः १५ ॥

वे लोग यह निश्चय करते हैं कि आज मैं ने यह धन पाया और मेरा मनोरथ यह प्राप्त होगा और यह बस्तु मेरी है वह भी मेरीही है और आगे बहुत साधन मुझको प्राप्त होगा १३ वहमेरा शत्रु आज मैंने मारा और शेष को मारूंगा और ईश्वर मही हूं और भोगी सिद्ध बलवान् और सुखी भी महीहूं १४ वे लोग धन और कुल में अभिमानी होके इस जगत् में जानते हैं कि हमारी समान कोई नहीं और यज्ञदान करके प्रतिष्ठित हो हमीं हर्ष को प्राप्त होंगे इस बिधि अज्ञान से मोह को प्राप्त होते हैं १५ ॥

अनेकचित्तविभ्रांता मोहजालसमावृताः ॥ प्रसक्ताःकामभोगेषु पतन्तिनरकेशुचौ १६ आत्मसंभाविताःस्तब्धा धनमानमदान्विताः ॥ यजन्तेनामयज्ञैस्ते दंभेनाविधिपूर्वकम् १७ अहंकारंबलंदर्प्पं कामंक्रोधंचसंश्रिताः ॥ मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषंतोऽभ्यसूयकाः १८ ॥

अनेक प्रकारकी चित्तकी भ्रांति से मोहरूपी जाल में घिर के केवल काम भोगही को पुरुषार्थ जानते हुये रौरव आदि महा अपवित्र नरक में पड़ते हैं १६ अपने मनसे अपने को श्रेष्ठजानकर अनम्रहो धनकी अधिकता से मद और अभिमान से युक्तहो केवल प्रतिष्ठा के हेतु वेदोक्त बिधि त्यागकर कपटसे यत्न करते हैं १७ अहंकार बल दर्प काम और क्रोधसे युक्तहोकर मुझको सर्वव्यापी न जानके द्वेषकरते हैं और विवेकियों की निन्दा करते हुये दंभ से यज्ञ करते हैं १८ ॥

तानहंद्विषतःक्रूरान्संसारेषुनराधमान् ॥ क्षिपान्यजस्रमशुभानाऽसुरीष्वेवयोनिषु १९ आसुरींयोनिमापन्ना मूढाजन्मनिजन्मनि ॥ मामप्राप्यैवकौंतेय ततोयान्त्यधमाङ्गतिम् २० त्रिविधं नरकस्येदं द्वारन्नाशकमात्मनः ॥ कामःक्रोधस्तथालोभस्तस्मादेतत्त्रयन्त्यजेत् २१ ॥

अधम क्रूर स्वभावद्वेषयुक्तऔर अशुभ कर्म्मकारीनरों को मैं सर्वदा कृमि कीटादि योनि में जन्म प्राप्तिके लिये इस संसार में नियोग करता हूं १९ हे अर्जुन वे मूढ लोग कृमि कीटादि योनि को प्राप्तहो जन्म जन्म मुझ को प्राप्त न होकर तदनन्तर अधम गति को प्राप्तहोते हैं २० ये तीनों अर्थात् काम क्रोध और लोभ विवेक ज्ञान नाश करने वाले नरक के द्वार हैं इसलिये इन तीनों का त्याग करना उचित है २१ ॥

एतैर्विमुक्तःकौंतेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ॥ आचरत्यात्मनश्श्रेयस्ततोयातिपराङ्गतिम् २२ ॥ यःशास्त्रविधिमुत्सृत्य वर्त्ततेकामकारतः ॥ नससिद्धिमवाप्नोति नसुखंनपराङ्गतिम् २३ तस्माच्छास्त्रंप्रमाणंतेकार्य्याकार्य्यव्यवस्थितौ ॥ ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तंकर्म्मकर्तुमिहार्हसि २४ ॥

इतिश्री मन्महाभारते शतसहस्रसंहितायां
वैयासिक्यांभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीता
सूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादेदेवासुर
सम्पत्तियोगोनामषोड़शो
ऽध्यायः १६ ॥

हे अर्जुन जो पुरुष इनतीनों नरक प्रापक द्वारों से मुक्त होके अपना शुभाचरण करता है सो तदनन्तर मोक्षगति को प्राप्त होता है २२ जो पुरुष शास्त्र विहित विधिको त्याग करके कामासक्त रहता है सो सिद्धिको न प्राप्त होकर सुख और मोक्षको नहीं प्राप्त होता २३ हे अर्जुन इस हेतु कर्म्माचरण और त्याग की अवस्था में शास्त्रही प्रमाण है इसलिये शास्त्र विहित कर्तव्य और अकर्त्तव्य कर्म्म को जानकर कर्म्म अधिकार को आचरण करने के योग्य है २४ ॥

देवासुरसम्पत्तिनिरूपणसोलहवांअध्यायसमाप्तहुआ१६

अर्जुनउवाच ॥ येशास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विता ॥ तेषांनिष्ठातुकाकृष्णसत्त्वमोहार जस्तमः १ श्रीभगवानुवाच॥त्रिविधाभवतिश्रद्धा देहिनांसास्वभावजा ॥ सात्विकीराजसीचैवताम सीचेतितांशृणु २ सत्त्वानुरूपासर्वस्यश्रद्धाभ वतिभारत ॥ श्रद्धामयोयंपुरुषो योयच्छ्रद्धस्सएव सः ३ ॥

अर्जुन प्रश्न करते हैं हे कृष्ण जो लोग शास्त्र बिधि को त्यागकर श्रद्धायुक्त हो यज्ञ करतेहैं उनकी क्या निष्ठा है सत्त्व रज या तम अर्थात् इन तीनों गुणों में उनकी पूजा किस गुणवाली गिनीजाती है१भगवान् उत्तरदेतेहैं

प्राणियों को तीन प्रकारकी श्रद्धा स्वभाव से होतीहैं अर्थात् सात्विकी राजसी और तामसी उसे निरूपण करता हूं सो सुनो २ सब मनुष्यों को श्रद्धा सत्त्व के अनुसार होती है इसलिये वे मनुष्य श्रद्धावान् कहलाते हैं और जैसी जिसकी श्रद्धा राजसी या तामसी होती है वैसे ही सब पुरुष कहलाते हैं ३ ॥

यजन्तेसात्विकादेवान्यक्षरक्षांसिराजसाः ॥ प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्तेतामसाजनाः ४ अशास्त्रविहितंघोरंतप्यन्तेयेत पोजनाः ॥ दंभाहं कारसंयुक्ताःकामरागबलान्विताः ५ कर्षयन्तःशरी रस्थं भूतग्राममचेतसः ॥ मांचैवान्तश्शरीरस्थं तान्विद्धासुरनिश्चयान् ६ ॥

सात्विक श्रद्धावाले देवतोंकी आराधनाकरते हैं और राजसी लोग यक्ष और राक्षसों की उपासना करते हैं और तमोगुणवाले अपने गुण के अनुसार भूत प्रेत गणों की पूजा करते हैं ४ जो लोग शास्त्र बिरुद्ध घोर कर्म्माचरण करतेहैं और दंभ अहंकारकामराग और दुराग्रहसे युक्त हैं ५ ऐसे लोग उपवास आदि नियम से शरीर स्थिति पृथ्वीआदि पञ्चभूत समुदाय और मुझको शरीर में व्याप्त न जानकर सुखाते हैं उन्हें तमोगुण प्रधान जानो क्योंकि विवेक ज्ञान से रहित हैं ६ ॥

आहारस्त्वपिसर्वस्य त्रिविधोभवतिप्रियः ॥

यज्ञस्तपस्तथादानं तेषांभेदमिमंशृणु ७ आयु स्सत्वबलारोग्य सुखप्रीतिविवर्द्धनाः ॥ रस्याः स्निग्धास्स्थिराहृद्या आहाराःसात्विकप्रियाः ८ कट्वम्ललवणात्युष्ण तीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ॥ आहारााराजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ९ ॥

सात्विकआदि तीन प्रकारके मनुष्यों के आहार भी तीन प्रकार के प्रियहैं और वैसेही यज्ञ तप और दानभी उनके तीनप्रकार के हैं उसको निरूपण करता हूं सो सुनो ७ आयुष्य उत्साह शक्ति आरोग्यता और प्रीति के बढ़ानेवाले रस और स्नेह से युक्त चिरकाल रसरूप से शरीरमें स्थित दर्शन ही से चित्त को सन्तोष करने वाले आहार सात्विक गुणवाले को प्रिय हैं ८ कि यह दुःख शोक और रोग का उत्पादक है ९ ॥

यातयामंगतरसं पूतिपर्युषितंचयत् ॥ उच्छि ष्टमपिचामेध्यं भोजनंतामसप्रियम् १० अफला कांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टोयइज्यते ॥ यष्टव्यमेवेति मनः समाधायससात्विकः ११ अभिसंधायतुफ लं दंभार्थमपिचैवयत् ॥ इज्यतेभरतश्रेष्ठतंयज्ञं विद्धिराजसम् १२ ॥

ठंढा निरसदुर्गंधित बासीबचाहुआऔर जूठाअपवि· त्र भोजन तामसियों को प्रिय है १० फलाकांक्षा

रहित पुरुषको शास्त्रके अनुसार यज्ञकरना उचितजान कर मनके निश्चय से यज्ञ अनुष्ठान करते हैं सो सात्विक यज्ञ कहलाताहै ११ हे अर्जुनजो लोग फलकी इच्छासे कपट आचरणसे यज्ञ करते हैं सो राजस यज्ञ कहलाता है १२ ॥

विधिहीनमसृष्टान्नं मंत्रहीनमदक्षिणाम् ॥ श्रद्धाविरहितंयज्ञं तामसंपरिचक्षते १३ देवद्विजगुरुप्राज्ञ पूजनंशौचमार्जवम् ॥ ब्रह्मचर्य्यमहिंसा चशारीरन्तपउच्यते १४ अनुद्वेगकरंवाक्यंसत्यं प्रियहितंचयत् ॥स्वाध्यायाभ्यसनंचैववाङ्मयन्त पउच्यते १५ ॥

शास्त्रोक्त बिधिसेरहित अयोग्य सामग्री कुमंत्र और बिना दक्षिणा और बिना श्रद्धाके जो यज्ञ आचरण कियाजाता है सो तामस कहलाता है १३ देवता ब्राह्मण गुरू और पूज्यलोगोंकी पूजा और अपनी पवित्रता और सुमार्ग से चलना ब्रह्मचर्य्य और अहिंसासे रहना यह शरीर तप कहला है १४ किसीको बार्त्तासे दुःख न देना सत्य बोलना प्रिय और हित की बात कहना और वेदाभ्यास करना यह बाणी तप कहलाता है १५ ॥

मनःप्रसादःसौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः ॥ भावसंशुद्धिरित्येतत्तपोमानसमुच्यते १६ श्रद्ध

यापरयातप्तंतपस्तत्त्रिविधंनरैः ॥ अफलाकांक्षिभिर्युक्तैः सात्विकंपरिचक्षते १७ सत्कारमानपूजार्थंतपोदंभेनचैवयत् ॥ क्रियतेतदिहप्रोक्तं राजसंचलमध्रुवम् १८ ॥

इच्छा मन से सुमार्ग अनुसारी होकर मौन अर्थात् व्यर्थ भाषण छोंड़ बिषयोंसे इन्द्रियोंको रोक स्वभावसे शुद्धरहकरजो तपआचरण करते हैं सोमानसतप कहलाताहै १६ उत्तम श्रद्धासे फलाकांक्षा रहितएकाग्र चित्त वालेनरों ने जोतप आचरण किया सोसात्विककहलाताहै १७ जोतप कपटसे सत्कार मान और प्रतिष्ठा के हेतुआचरण किया जाता है सो इसकर्म्म लोक में राजस तप क्षणिक और अनित्य कहलाता है १८ ॥

मूढ़ाग्राहेणात्मनोयत्पीडयाक्रियतेतपः ॥ परस्योत्सादनार्थंवातत्तामसमुदाहृतम् १६ दातव्यमितियद्दानंदीयतेनुपकारिणे॥देशेकालेचपात्रेचतद्दानंसात्विकंस्मृतम् २० यत्तुप्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्यवापुनः ॥ दीयतेचपरिक्लिष्टंतद्राजसमुदाहृतम् २१ ॥

अविवेकता से युक्त अयुक्त बिचार न करके मनके खेदसे या दूसरेके नाशके हेतु जोतप आचरण किया जाताहै सो तामस कहलाता है १६ दातव्य बुद्धिसे

पुण्यदेश पुण्यकाल में जोदानदे और उस पुरुष से अपना उपकार न करावै सो सात्विक कहलाताहै २० जोदान उपकारकी बुद्धि था स्वर्गादि फलके उद्देशऔर खेदित चित्तसेदिया जाताहै सोराजस कहलाताहै २१ ॥

अदेशकालेयद्दानमपात्रेभ्यश्चदीयते ॥ असत्कृतमवज्ञातंतत्तामसमुदाहृतम् २२ ओंतत्सदितिनिर्देशोब्रह्मणस्त्रिविधःस्मृतः ॥ ब्राह्मणास्तेनवेदाश्च यज्ञाश्चविहिताःपुरा २३ तस्मादोमित्युदाहृत्ययज्ञदानतपःक्रियाः ॥ प्रवर्त्तन्तेविधानोक्ताःसततंब्रह्मवादिनाम् २४ ॥

जोदान अपवित्र देश और कुसमय में अयोग्य को असत्कारसे निन्दापूर्वक देते हैं सो तामस कहलाता है २२ पूर्वकालमें ओंतत्सत् के उच्चारण से ब्रह्म के तीन प्रकारके स्मरणहैं उनसे ब्राह्मण वेद और यज्ञ ये तीनों निर्माण किये गयेहैं इसलिये वेद जानने वाले पुरुषको यज्ञदान और तपमेंसर्वदा शास्त्रोक्तप्रकारसेओंकारपूर्वक प्रवृत्ति होना उचितहै २३। २४ ॥

तदित्यनभिसंधाय फलंयज्ञतपःक्रियाः ॥ दानक्रियाश्चविविधाः क्रियन्तेमोक्षकांक्षिभिः २५ सद्भावेसाधुभावेचसदित्येतत्प्रयुज्यते ॥ प्रशस्तेकर्म्मणितथासच्छब्दःपार्थयुज्यते २६ यज्ञेतप

सिदानेचस्थितिस्सदितिचोच्यते ॥ कर्म्मचैवत
दर्थीयंसदित्येवाभिधीयते २७ ॥

मुमुक्षुपुरुष यहनिश्चय न करके कि इसका यहफल
हमको मिलै अनेक प्रकारके दान यज्ञ और तप करते
हैं इसीसे चित्त शुद्धिके द्वारा मोक्ष उपयोगी होतेहैं २५
सद्भाव और साधुभाव योग्य कर्म्ममें भी हैं अर्जुन
सत्शब्दका प्रयोग होताहै २६ यज्ञ दान और तपतीनों
में जो स्थिरता से हो सत्शब्द का प्रयोग होताहै और
इनके सम्बन्धी कर्म्ममें भीसत्शब्दका प्रयोगहोताहै २७॥

अश्रद्धयाहुतंदत्तंतपस्तप्तंकृतंचयत्॥ असदि
त्युच्यतेपार्थ नचतत्प्रेत्यनोइह २८ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेशतसहस्रसंहितायांवैया
सिक्यांभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीतासूप
षत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णा
र्जुन सम्वादे त्रिगुणविभागयोगो
नाम सप्तदशोऽध्यायः १७ ॥

हे पार्थ अश्रद्धासे जो होम दान तप और कुछ कर्म्म
किया जाताहै सो असत् कहलाता है इसलिये वहइस
लोक और परलोकमें उपकारी नहीं होता २८ ॥

गुणत्रय विभाग निरूपण नामक सत्रहवां
अध्याय समाप्त हुआ १७ ॥

अर्जुनउवाच॥संन्यासस्यमहाबाहोतत्त्वमिच्छा मिवेदितुम् ॥ त्यागस्यचहृषीकेश पृथक्केशिनि षूदन १ श्रीभगवानुवाच॥काम्यानांकर्म्मणांन्या संसंन्यासंकवयोविदुः ॥ सर्वकर्मफलत्यागं प्राहु स्त्यागंविचक्षणाः २ त्याज्यंदोषवदित्येके कर्म्म प्राहुर्म्मनीषिणः ॥ यज्ञदानतपःकर्म्म नत्याज्य मितिचापरे ३ ॥

अर्जुन प्रश्नकरतेहैं कि हेमहाबाहो श्रीकृष्णसंन्यास और त्याग दोनोंके पृथक्पृथक् स्वरूप जाननेकी इच्छा करताहूं क्योंकि तुमसम्पूर्ण इन्द्रियोंके ईश्वर औरकेशी नामक पराक्रमी दैत्यके नाशक हो १ भगवान् उत्तरदेते हैं कि सम्पूर्ण काम्य कर्मों के त्यागहीको पंडित लोग संन्यास जानतेहैं और विचारवान् पुरुष सम्पूर्ण कर्मों के फल त्यागहीको त्याग कहते हैं कर्म्म त्याग करना आवश्यक नहीं २ विवेकील्लोक सम्पूर्ण कर्मोंमें दोषदेख कर त्यागकरना उसका उचित कहतेहैं क्योंकि सम्पूर्ण कर्म्मअर्थ मूलकहैं और मीमांसक लोग यज्ञ दान और तपादिकर्मों को कहतेहैं कि त्याग करनाउचितनहीं ३॥

निश्चयंशृणुमेतत्रत्यागेभरतसत्तम॥त्यागोहि पुरुषव्याघ्र त्रिविधस्संप्रकीर्तितः ४ यज्ञदान तपःकर्म्म नत्याज्यंकार्य्यमेवतत् ॥ यज्ञोदानन्त

पञ्चैवपावनानिमनीषिणाम् ५ एतान्यपितुकर्म्मा णिसंगंत्यक्काफलानिच॥कर्त्तव्यानीतिमेपार्थ नि श्चितंमतमुत्तमम् ६ ॥

हे अर्जुन त्यागके विषयमें हमारा निश्चययहहै सुनो कि जिसकारण से तत्त्वदर्शी लोग त्यागके भेदको तीन प्रकार कहतेहैं ४ यज्ञदान और तपतीनों करनेके योग्य हैं कदापि इनका त्याग उचित नहीं क्योंकि यज्ञ आदि कर्म्म बुद्धिमान् लोगोंके चित्त शुद्धिका हेतुहै ५ हेपार्थ जिस प्रकारसे मैंने कर्म्म करनेको कहाहै उसप्रकार से करै फेर कर्म्म फल और अभिमान त्यागकरके यह मेरा निश्चय और उत्तम मत है ६ ॥

नियतस्यतुसंन्यासःकर्म्मणोनोपपद्यते ॥ मो हात्तस्यपरित्यागस्तामसःपरिकीर्तितः ७ दुःख मित्येवयत्कर्म्मकायक्लेशभयात्यजेत् ॥ सकृत्वा राजसंत्यागं नैवत्यागफलंलभेत् ८ कार्य्यमित्य वयत्कर्म्मनियतंक्रियतेऽर्जुन ॥संगंत्यक्त्वाफलंचै वसत्यागःसात्विकोमतः ९ ॥

नित्य विहित कर्मोंका त्याग नहीं संभवहोता यदि अपनी अविवेकता से उनका त्यागकरै तो तामस त्याग कहलाताहै ७ जो पुरुष कर्म्मको दुःख जानकर यह श- रीर की पीड़ाके भयसे त्याग करेगा सो राजसत्यागी है इसलिये वह कर्म्म त्यागका फल उसे नहीं मिलेगा ८

हे अर्जुन जो कर्म्म नित्यकरनेके योग्यहै उसे जानकर फल और अभिमान त्यागकर आचरणकरै सोसात्विक त्याग है और हमारी जान में उत्तम है ९ ॥

नद्वेष्ट्यकुशलंकर्म्म कुशलेनानुषज्यते॥ त्यागीसत्त्वसमाविष्टोमेधावीछिन्नसंशयः १० नहिदेहभृताशक्यं त्यक्तुंकर्म्माण्यशेषतः ॥ यस्तुकर्म्मफलत्यागी सत्यागीत्यभिधीयते ११ अनिष्टमिष्टंमिश्रञ्च त्रिविधंकर्म्मणःफलम् ॥ भवत्यत्यागिनांप्रेत्यनतु संन्यासिनांक्वचित् १२ ॥

जो पुरुष दुःखदायक कर्मोंसे द्वेष न करै और सुखदायी कर्मोंमें सुख आचरणन करै तो वहसात्विक त्यागी बल और बुद्धिको प्राप्तहोताहै और संशयसे भी निवृत्त होताहै १० यह देहधारी मनुष्य सम्पूर्ण कर्मोंका त्यागनहीं करसक्ता है इससे जो कर्म्म फलकी इच्छा छोंड़कर कर्म्म त्याग करेगा सो त्यागी कहलावेगा ११ कर्म्म फल तीन प्रकारका है नष्ट इष्ट और इष्ट मिश्रित सो सकाम पुरुषों को ये तीनोंका फल शरीर त्यागने पर मिलता है और संन्यासी अर्थात् कर्म्म फल त्यागी इनतीनों प्रकार के फलको नहीं प्राप्त होते १२ ॥

पञ्चैतानिमहाबाहो कारणानिनिबोधमे ॥ सांख्येकृतांतेप्रोक्तानिसिद्धयेसर्वकर्म्मणाम् ॥ १३ अधिष्ठानंतथाकर्ताकरणञ्चपृथक्विधम् ॥ विवि

धाश्चपृथक्चेष्टा दैवंचैवात्रपंचमम् १४ शरीर वाङ्मनोभिर्यत्कर्म्मप्रारभतेनरः ॥ न्याय्यंवाविप रीतंवापंचैतेतस्यहेतवः १५ ॥

हे महाबाहो अर्जुन सम्पूर्ण कर्म्मोंकी सिद्धि के हेतु सांख्य और वेदांत में पांचों कारण निरूपण कियेहैं सो तुम्हारे हेतु कहताहूँ सुनो १३ पहिला अधिष्ठान अर्थात् शरीर और दूसरा कर्त्ता अर्थात् अहङ्कार तीसरा पृथक् पृथक् इन्द्रियां चौथी नानाप्रकारकी चेष्टा और पांचवां दैवका कारण जानो १४ शरीर वाणी और मन के भेदसे कर्म्म तीन प्रकार के हैं उन्हें न्याय अथवा अन्याय से मनुष्य जो प्रारम्भ करता है उसके वही पांचों कारण हैं १५ ॥

तत्रैवंसतिकर्त्तारमात्मानंकेवलन्तुयः ॥ पश्य न्त्यकृतबुद्धित्वान्नसपश्यतिदुर्मतिः १६ यस्यना हंकृतोभावोबुद्धिर्यस्यनलिप्यते ॥ हत्वापिसइमाँ ल्लोकान्नहन्तिननिवध्यते १७ ज्ञानंज्ञेयंपरिज्ञा तात्रिविधाकर्म्मचोदना ॥ करणंकर्म्मकर्त्तेति त्रि विधःकर्म्मसंग्रहः १८ ॥

सम्पूर्ण कर्मोंमें पूर्वोक्त पांचों कारण होतेहैं तिन्हें न जानकर जो पुरुष केवल आत्माको कर्त्ताजानताहै सो शास्त्र और गुरु उपदेश ज्ञान से रहित हो दृश्य वस्तु को अविवेकता से देख नहीं सक्ता १६ जिस पुरुष में

अहंकार नहीं सो सर्बदर्शी पुरुष सम्पूर्ण प्राणियों को लोक दृष्टि से पृथक् और बिबेक दृष्टि से भिन्न नहीं देखता सो सबको हनन भी करै तो नहीं किया जानो और न किसी कर्म्म फल से बद्ध होता है क्योंकि उस की पापशंका दूर होगई है १७ कर्म्म की प्रेरणा ज्ञान ज्ञेय और ज्ञाताके भेदसे तीन प्रकारकी है और उनके गुणकर्म्म और कर्त्ता इनतीनों भेदोंसे कर्म्म संग्रह करने वाले कारक भी तीन प्रकारके हैं १८ ॥

ज्ञानंकर्मचकर्त्ता त्रिधैवगुणभेदतः ॥ प्रोच्य तेगुणसंख्यानेयथावच्छृणुतान्यपि १९ सर्वभूते षुयेनैकंभावमव्ययमीक्ष्यते ॥ अविभक्तंविभक्ते षुतज्ज्ञानंविद्धिसात्विकं २० पृथक्त्वेनतुयज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् । वेत्तिसर्वेषुभूतेषुतज्ज्ञा नंविद्धिराजसम् २१

ज्ञान कर्म्म और कर्त्ताये तीनों प्रत्येक सत्त्वादि गुणों के भेदसे सांख्यशास्त्रमें जैसा कहाहै सो निरूपण कर्त्ता हूं सुनो १९ जो पुरुष सम्पूर्ण स्थावरादि भूतोंमें निर्बि- कार परमात्मा तत्त्व एक रूपसे भिन्न भिन्न में अभेद देखता है और उसका ज्ञान सात्विक है २० जो ज्ञान सम्पूर्ण भूतों में सुख दुःख आदि नाना प्रकारके स्वभाव से भिन्न भिन्न देखाई पड़ता है सो राजस है २१ ॥

यत्तुकृत्स्नवदेकस्मिन्कार्य्येसक्तमहेतुकम् ॥

अतत्त्वार्थवदल्पञ्चतत्तामसमुदाहृतम् २२ निय
तंसंगरहितमरागद्वेषतःकृतं ॥ अफलप्रेप्सुनाक
र्म्मयत्तत्सात्विकमुच्यते २३ यत्तुकामेप्सुनाकर्म
साहंकारेणवापुनः ॥ क्रियतेबहुलायासंतद्राज
समुदाहृतम् २४ ॥

जो ज्ञानएकही देहादिकार्य्यमें परिपूर्णतासे ईश्वर के परिच्छिन्न रूपसे बिना प्रमाण और अपारमार्थिक है सो तामस और तुच्छहै २२ जो कर्म्म नित्यबिधिबिहित और कर्तृत्वाभिमान रहित और बिना रागद्वेष और फल प्राप्ति की इच्छाबिनासे किया जाताहैसो सात्विक कर्म्म कहलाता है २३ जो कर्म्म मनोकामनाकी सिद्धि के हेतु वा अहंकार से बहुत क्लेशके साथ कियाजाताहै सो राजस कहलाता है २४ ॥

अनुबंधंक्षयंहिंसामनवेक्ष्यचपौरुषम् ॥ मो
हादारभ्यतेकर्म्म तत्तामसमुदाहृतम् २५ मुक्तसं
गोनहंवादीधृत्युत्साहसमन्वितः॥सिद्ध्यसिद्ध्यो
र्निर्विकारः कर्त्तासात्विकउच्यते २६ रागीकर्म्म
फलप्रेप्सुर्लुब्धोहिंसात्मकोशुचिः ॥ हर्षशोकान्वि
तःकर्त्ता राजसःपरि कीर्त्तितः २७ ॥

जोकर्म्मफल द्रव्यनाशपर पीड़ाऔरअपनी सामर्थ्य के बिना बिचार केवल अविवेकता से प्रारम्भ किया

जाताहैसो तामस कहलाताहै २५जो पुरुष कर्तृत्वाभि-
मान त्याग और अपना पुरुषार्थ न प्रकट करके धैर्य्य
और संतोष युक्तहो उसकी सिद्धि और असिद्धिकाहर्ष
बिषाद छोड़कर कर्ममें प्रवृत्त होताहै सो सात्विक कर्ता
कहलाताहै २६ जो पुरुष राग युक्त हो कर्म्म फल की
इच्छालोभ और हिंसासे युक्त अपवित्र रहकर उसकी
प्राप्ति में संतोष और अप्राप्ति से दुःखी हो कर्म्म कर्ता
है सो राजस कर्ता कहलाता है २७ ॥

अयुक्तःप्राकृतस्तब्धःशठोनैष्कृतिकोऽलसः॥
विषादीदीर्घसूत्रीचकर्त्तातामसउच्यते २८ बुद्धेर्भे
दंधृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधंशृणु ॥प्रोच्यमानमशेषे
णपृथक्त्वेनधनञ्जय २९ प्रवृत्तिञ्चनिवृत्तिञ्च
कार्य्याकार्य्येभयाभये ॥ बन्धंमोक्षंचयोवेत्तिबुद्धि
स्सापार्थसात्विकी ३० ॥

जो पुरुष विहित मार्ग त्यागकर बिबेक शून्य और
अनम्रहो छल से दूसरे के तिरस्कारमें प्रवृत्तहो आल-
स्यसहित दुःखित और दीर्घ बिचारसे कर्म्म कर्ताहै सो
तामस कहलाता है २८ हे अर्जुन बुद्धि और धैर्य्यदोनों
सत्त्वादि गुणके भेदसे तीन प्रकारके हैं उनका भेद
पृथक् पृथक् आगे निरूपण करेंगेसो सुनो २९ हेअर्जुन
जो बुद्धि धर्म्म में प्रवृत्त और अधर्म्म में निवृत्त बिहित

कार्य में अभय और निंदित कर्म्ममें भयकरै और बन्ध मोक्षका कारण जाननेवाली हो सो सात्त्विकीहै ३० ॥

ययाधर्म्ममधर्म्मञ्च कार्य्याकार्य्येभयाभये॥ अयथावत्प्रजानाति बुद्धिःसापार्थराजसी ३१ अधर्म्मंधर्म्ममितियामन्यतेतमसावृता ॥ सर्वा र्थान्विपरीतांश्च बुद्धिःसापार्थतामसी ३२ धृत्या ययाधारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ॥ योगेनव्य भिचारिण्या धृतिःसापार्थसात्त्विकी ३३ ॥

हे अर्जुन पुरुष जिस बुद्धि से धर्म्म अधर्म्म कर्तृत्व और अकर्तृत्व को संदेहसे देखताहै सोराजसी बुद्धि कहलाती है ३१ हे अर्जुन जिस बुद्धि सेधर्म्मको अधर्म और सम्पूर्ण पदार्थों को अन्यथा भावसे देखता है सो अज्ञानाच्छादित होनेसे तामसी बुद्धि कहलातीहै ३२ हे पार्थ जिसधारणा शक्ति से पुरुष मन प्राण और इन्द्री के क्रियाओं का धारण कर्त्ता है सो एकाग्र युक्त होनेसे वह धारणा शक्ति सात्त्विकी कहलाती है ३३ ॥

ययातुधर्म्मकामार्थान्धृत्याधारयतेऽर्जुन ॥ प्र संगेनफलाकांक्षी धृतिस्सापार्थराजसी ३४ यया स्वप्नंभयंशोकंविषादंमदमेवच ॥ नविमुञ्चतिदुर्मे धाधृतिःसापार्थतामसी ३५ सुखंत्विदानींत्रिवि

धंशृणुमेभरतर्षभ ॥ अभ्यासाद्रमतेयत्रदुःखान्त
चनिगच्छति ३६ ॥

हे अर्जुन जिस धारणा शक्ति से धर्म्म कामादि के सम्बन्ध में फलकी इच्छा करता है सो राजसी धारणा शक्ति कहलाती है ३४ हे अर्जुन जिस धारणा शक्ति से पुरुष स्वप्न भय शोकबिषाद और उन्मत्तताको नहीं त्याग करता सो धृत तामसी कहलातीहै ३५ हे अर्जुन अब सुखको सत्त्वादि गुण से तीन प्रकार में निरूपण करता हूं सो सुनो जिस सुख में अभ्याससे चित्तरमता है और दुःख से निवृत्त भी होता है ३६ ॥

यत्तदग्रेविषमिवपरिणामेमृतोपमम् ॥ तत्सु
खंसात्विकंप्रोक्तमात्मबुद्धिस्वभावजम् ३७ विष
येन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेमृतोपमम् ॥ परिणामेवि
षमिवतत्सुखंराजसंस्मृतम् ३८ यदग्रेचानुबन्धे
चसुखंमोहनमात्मनः ॥ निद्रालस्यप्रमादोत्थंत
त्तामसमुदाहृतम् ३९ ॥

जो पहिले बिषवत् देखपड़ता और परिणाम उसका अमृत तुल्य होता है सो सुख मन और बुद्धिको स्वच्छ कारी होनेसे सात्विक कहलाता है ३७हे अर्जुन विषय और इन्द्री के संयोग से सुख उत्पन्न होता है उसमें

जो पहिले अमृत तुल्य देखाई देके अंतमें बिषकी नाईं दुःखदायी होता है सो राजस सुख कहलाता है ३८ जो सुख पहिले और अनुभवके अनन्तर मन मोहक-है और निद्रा आलस्य और अविवेकता से उत्पन्नहोताहै सो तामस सुख कहलाता है ३९ ॥

नतदस्तिपृथिव्यांवा दिविदेवेषुवापुनः ॥ सत्वंप्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिःस्यात्त्रिभिर्गुणैः ४० ब्राह्मणक्षत्रियविशांशूद्राणांचपरन्तप ॥ कर्म्माणिप्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ४१ शमोदमस्तपश्शौचंक्षान्तिरार्जवमेवच ॥ ज्ञानंविज्ञानमास्तिक्यंब्रह्मकर्म्मस्वभावजम् ४२ ॥

प्रकृति जन्य सत्वादि तीनों गुणों से छुटी हुई बस्तु या प्राणी पृथ्वीस्वर्ग या देवलोक में है नहीं ४० हे अर्जुन ब्राह्मण क्षत्री बैश्य और शूद्र चारों बर्णों के सत्वादि स्वभाव जन्य गुणों के यथा योग्य उनके पृथक् पृथक् बिभाग किये गये हैं ४१ चित्त शान्ति बाह्य इन्द्रिय का निग्रह तप बाह्यान्तर शौच क्षमा निश्छलता शास्त्र जन्य ज्ञान अनुभव जन्य बिज्ञान और परलोक बिषयक नित्यत्व बुद्धि ये ब्राह्मणके स्वभाव सिद्ध कर्म्म हैं ४२ ॥

शौर्य्यन्तेजोधृतिर्दाक्ष्यंयुद्धेचाप्यऽपलायनम् ॥

दानमीश्वरभावश्च क्षात्रंकर्म्मस्वभावजम् ४३ कृषिगोरक्षवाणिज्यंवैश्यकर्म्मस्वभावजम् ॥ परिचर्यात्मकंकर्म्म शूद्रस्यापिस्वभावजम् ४४ स्वेस्वेकर्म्मण्यभिरतः संसिद्धिंलभतेनरः॥स्वकर्म्मनिरतःसिद्धिं यथाविन्दतितच्छृणु ४५ ॥

शौर्य्य तेज धैर्य्य चातुर्य्य युद्धसे न भागना उदारता और प्रजापालन शक्ति ये सब क्षत्री के स्वभाव सिद्ध कर्म्म हैं ४३ खेती बारी करना गौचरावना बाणिज्य करना ये बैश्यके स्वभाव सिद्ध कर्म्महैं और शूद्र का ब्राह्मण आदि तीनों बर्णोंकी सेवा करना स्वभाव सिद्ध कर्म्म है ४४ अपने अपने कर्म्म में मनुष्य आसक्तहोकर उसकी सिद्धिको प्राप्तहोताहै अब स्वकर्म्मयुक्त पुरुष जैसे तत्त्वज्ञान को प्राप्त होता है सो कहता हूं सुनो ४५ ॥

यतःप्रवृत्तिर्भूतानां येनसर्वमिदंततम् ॥ स्वकर्म्मणातमभ्यर्च्य सिद्धिंविन्दतिमानवः ४६ श्रेयान्स्वधर्म्मोविगुणः परधर्म्मात्स्वनुष्ठितात् ॥ स्वभावनियतङ्कर्म्मकुर्वन्नाप्नोतिकिल्बिषम् ४७ सहजंकर्म्मकौन्तेय सदोषमपिनत्यजेत् ॥ सर्वारम्भाहिदोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः ४८ ॥

जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की प्रवृत्ति

होती है और जिस में सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है उस परमेश्वर को अपने विहित कर्म्म से आराधना करके मनुष्य सिद्धि को प्राप्त होता है ४६ यथा योग्य अनुष्ठान किये हुये परधर्म्म से अपना धर्म्म न्यून आचरण भी श्रेष्ठ है क्योंकि अपने अपने स्वभाव सिद्ध कर्म्म को आग्रह से आचरण करते हुये मनुष्य दुःख को नहीं प्राप्त होता है ४७ हे अर्जुन अपना स्वभाव विहित कर्म्म यदि दोष युक्तभी हो तो त्याग करना उस का उचित नहीं क्योंकि सम्पूर्ण कर्म्मों का आरम्भ दोष से युक्तही है जैसे धूम्र से अग्नि आवृत है ४८ ॥

असक्तबुद्धिस्सर्वत्र जितात्माविगतःस्पृहः ॥ नैष्कर्म्यसिद्धिंपरमां संन्यासेनाधिगच्छति ४९ सिद्धिंप्राप्तोयथाब्रह्मतथाप्नोतिनिबोधमे ॥ समासेनैवकौन्तेय निष्ठाज्ञानस्ययापरा ५० बुद्ध्याविशुद्धयायुक्तो धृत्यात्मानंनियम्यच ॥ शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वारागद्वेषौव्युदस्यच ५१ ॥

जो पुरुष असंग बुद्धि और अहंकार जित आत्मा किसी बिषयकी इच्छा न करके व्यवहार करता है वह संन्यासमे श्रेष्ठ सम्पूर्ण कर्म्म त्यागकर ब्रह्मात्मभावरूप सिद्धि को प्राप्त होता है ४९ हे अर्जुन जिस प्रकार से पुरुष निष्कर्म्म सिद्धिको प्राप्तहोके ब्रह्मको प्राप्तहोता

है सो प्रकार संक्षेपमें कहता हूं सुनो क्योंकि निष्कर्म्म सिद्धि ज्ञानकाहेतु है ५० सात्विक बुद्धि से युक्तहोकर धारणा शक्तिसे उस को निश्चलकर शब्दादिक बिषय और राग द्वेष को त्याग करै ५१ ॥

विविक्तसेवी लघ्वासी यतवाक्कायमानसः ॥ ध्यानयोगपरोनित्यं वैराग्यंसमुपाश्रितः ५२ अहङ्कारंबलंदर्पं कामंक्रोधंपरिग्रहम् ॥ विमुच्य निर्ममश्शान्तो ब्रह्मभूयायकल्पते ५३ ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा नशोचतिनकांक्षति ॥ समस्सर्वेषु भूतेषुमद्भक्तिंलभतेपराम् ५४ ॥

एकान्तदेश में निवासकरके युक्ताहारहो बाणीशरीर और मन नियतहोकर बैराग्यसे युक्तहो ध्यान योग में तत्पर होवे ५२ अहंकार बल दर्प काम क्रोध और परिग्रह को त्याग निर्ममता हो शांतरहै वो ब्रह्मभावको प्राप्तहोनेके योग्य होता है ५३ ब्रह्म भावको प्राप्त भया हुआ पुरुष मन संतुष्ट होकर नतो शोक करता और न किसी बस्तुकी इच्छा और सम्पूर्ण भूतों को समान देखते हुये मेरी उत्तम भक्तिको प्राप्तहोता है ५४ ॥

भक्त्यामामभिजानातियावान्यश्चास्मितत्त्वतः ॥ ततोमान्तत्त्वतोज्ञात्वाविशतेतदनन्तर

मू ५५ सर्वकर्म्माण्यपिसदा कुर्वाणोमद्व्यपाश्र यः ॥ मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतंपदमव्यय मू ५६ चेतसासर्वकर्माणि मयिसंन्यस्यमत्परः॥ बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तःसततंभव ५७ ॥

अचल भक्तिद्वारा जो मुझको यथार्थ रूप से स-च्चिदानंद और सर्वव्यापी जानता है इस जाननेके अ-नंतर ऐसे तत्त्वज्ञानसे परमानन्दरूप होताहै ५५ नित्य नैमित्तिक सेवी कर्मोंको सदा करतेहुये केवल मुझीको आश्रयजाननेवाला पुरुष मेरे अनुग्रह से अनादिशाश्वत परमपद को प्राप्त होता है ५६ मुझी को परम पुरुषार्थ समझ के सम्पूर्ण को मन से मुझमें अर्पण कर एकाग्र बुद्धिसे युक्तहो सर्वदा मेरे ध्यान में तत्पर रहो ५७ ॥

मच्चित्तःसर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ॥ अथचेत्त्वमहंकारान्नश्रोष्यसिविनंक्ष्यसि ५८ य दहङ्कारमाश्रित्य नयोत्स्यइतिमन्यसे ॥ मिथ्यै षव्यवसायस्तेप्रकृतिस्त्वांनियोक्ष्यसि ५९ स्वभा वजेनकौन्तेय निबद्धस्स्वेनकर्म्मणा ॥ कर्त्तुंनेच्छ सियन्मोहात्करिष्यस्यवशोपितत् ६० ॥

तुममेरे ध्यानमें युक्तहो तो मेरे अनुग्रह से संसार सम्बन्धी दुःखोंसे तरजावोगे यदि अहंकार से मेरी

बात न सुनो तो अपने पुरुषार्थ से भ्रष्ट होजावोगे ५८ मेरा कहना न मान करके अपने अहंकार के बश हो युद्धकरोगे तो तुम्हारा यह युद्धका प्रयत्न व्यर्थ होगा तथापि रजोगुणके बशहो स्वभाव तुम्हारातुम्हें प्रवृत्त करेहीगा ५९ हे अर्जुन स्वभाव सिद्ध अपने शौर्यादिक कर्म्मसे निबद्ध होके जिस मोहसे करनेकी इच्छा से नहीं करते तिसपर बश होके अवश्य करोगे ६० ॥

ईश्वरःसर्वभूतानां हृद्देशेर्जुनतिष्ठति ॥ भ्रामयन्सर्वभूतानि यंत्रारूढानिमायया ६१ तमेवशरणङ्गच्छ सर्वभावेनभारत ॥ तत्प्रसादात्परांशांतिंस्थानंप्राप्स्यासिशाश्वतम् ६२ इतितेज्ञानमाख्यातंगुह्याद्गुह्यतरंमया ॥ विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसितथाकुरु ६३ ॥

हे अर्जुन परमेश्वर अपनी माया से सम्पूर्ण शरीरधारीभूतोंको भ्रमाताहुआ उनके हृदयमें निवासकरता है ६१ हे भारत अर्जुन सब प्रकार से उसी परमेश्वर के शरणागत हो उसीके अनुग्रहसे उत्कृष्ट शान्ति और अविनाशी मोक्ष पदको प्राप्त होगे ६२ इस प्रकार से गोपनीयज्ञान मैंने तुमसेकहा उस सम्पूर्ण पूर्वोक्त ज्ञान को विचारकरके जैसी तुम्हारी इच्छाहो वैसाकरो ६३ ॥

सर्वगुह्यतमंभूयःशृणुमेपरमंवचः ॥ इष्टोसि

मेदृढमिति ततोवक्ष्यामितेहितम् ६४ मन्मनाभ
वमद्भक्तो मद्याजीमान्नमस्कुरु ॥ मामेवैष्यासिस
त्यंतेप्रतिजानेप्रियोसिमे ६५ सर्वधर्म्मान्परित्य
ज्यमामेकंशरणंव्रज ॥ अहंत्वांसर्वपापेभ्यो मोक्ष
यिष्यामिमाशुच ६६ ॥

सम्पूर्ण गोपनीयसे गोपनीय मेरा उत्कृष्ट वचन
फिर सुनो क्योंकि तुम मेरे अत्यन्त इष्ट हो इसलिये
तुमपर विश्वास करके हित उपदेश करता हूं ६४ मुझ
में मन लगाके मेरी भक्ति मेरायज्ञ और नमस्कार आदि
मुझी को करो क्योंकि मुझी में प्राप्तहोगे यह मैं प्रतिज्ञा
करता हूं ६५ नानाप्रकार के कार्यों को त्यागकर केवल
मेरेशरणागतहो मैं सम्पूर्ण पापोंसे छोड़ाऊंगा इसलिये
कर्म्म त्याग जनित दोष से शोक न करो ६६ ॥

इदंतेनातपस्कायनाभक्तायकदाचन ॥ नचा
शुश्रूषवेवाच्यं नचमांयोभ्यसूयति ६७ यइदंपर
मंगुह्यंमद्भक्तेष्वभिधास्यति ॥ भक्तिंमयिपरांकृ
त्वामामेवैष्यत्यसंशयः ६८ नचतस्मान्मनुष्ये
षुकश्चिन्मेप्रियकृत्तमः ॥ भविताचमेतस्माद
न्यःप्रियतरोभुवि ६९ ॥

यह गीता शास्त्र तुम उस मनुष्य को न देना जो

अपने धर्म्म का अनुष्ठान और मेरी भक्ति और गुरूकी सेवा नहीं करता और मुझको मनुष्य जानकर निन्दा करता है ६७ जो पुरुष यह रहस्य गीताशास्त्र मेरेभक्तों को उपदेश करता है सो मेरी उत्कृष्ट भक्ति करते हुये संशय से मुक्तहो मुझमें प्राप्त होता है ६८ इस मृत्यु लोक में उस से अत्यन्त प्रिय कोई भी मुझ को न है न भया है न होगा ६९ ॥

अध्येष्यतेचयइमं धर्म्यंसंवादमावयोः ॥ ज्ञानयज्ञेनतेनाह मिष्टस्यामितिमेमतिः ७० श्रद्धावाननसूयश्चशृणुयादपियोनरः ॥ सोपिमुक्तश्शुभाँल्लोकात्प्राप्नुयात्पुण्यकर्म्मणाम् ७१ कच्चिदेतच्छ्रुतंपार्थ त्वयैकाग्रेणचेतसा ॥ कच्चिदज्ञानसंमोहःप्रणष्टस्तेधनंजय ७२ ॥

जो पुरुष यह हमारा तुम्हारा धर्म्म युक्त सम्बाद पढ़ैगा सो ज्ञान यज्ञ से आराधन करके मुझको संतुष्ट करेगा यह मुझको निश्चय है ७० जो पुरुष श्रद्धा युक्त और पर निन्दा रहितहोकर इस गीता तत्त्व को श्रवण करता है सो भी संसार में मुक्तहोके उस शुभलोक में प्राप्त होगा जिसमें पुण्य कर्म्म करनेवाले जाते हैं ७१ हे अर्जुन यह जो गीतासार तुमने एकाग्रचित्त से श्रवण किया इससे कुछ फल मिला या नहीं और अज्ञान से

उत्पन्न भयाहुआ मोह तुम्हारा नष्टभया या नहीं ७२ ॥

अर्जुनउवाच ॥ नष्टोमोहःस्मृतिर्लब्धात्वत्प्रसादान्मयाच्युत ॥ स्थितोऽस्मिगतसंदेहः करिष्येवचनंतव ७३ संजयउवाच ॥ इत्यहंवासुदेवस्यपार्थस्यचमहात्मनः ॥ संवादमिममश्रौषमद्भुतंरोमहर्षणम् ७४ व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहंपरम् ॥ योगंयोगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतःस्वयम् ७५ ॥

अर्जुन उत्तर देते हैं हे अच्युत श्रीकृष्ण तुम्हारे अनुग्रह से मेरा मोह नष्ट भया और मुझ को स्वरूप की स्मृति लाभ हुई और सन्देह से निवृत्तहोकर स्थिर हुआ अब जो कहो सो करूंगा ७३ सञ्जय धृतराष्ट्र से कहते हैं श्री कृष्ण और अर्जुन दोनों का अति अद्भुत और रोम हर्षण यह सम्बाद मैं ने सुना ७४ व्यास जी के प्रसाद से मैंने इस परम गोपनीय गीतायोगको जो श्रीकृष्ण योगेश्वर ने अपने मुख से कहा सो सुनो ७५ ॥

राजन्संस्मृत्यसंस्मृत्य संवादमिममद्भुतम् ॥ केशवार्जुनयोःपुण्यंहृष्यामिचमुहुर्मुहुः ७६ तच्चसंस्मृत्यसंस्मृत्य रूपमत्यद्भुतंहरेः ॥ विस्मयमो

महानूराजन्हृष्यामिचपुनःपुनः ७७ यत्रयोगे श्वरःकृष्णो यत्रपार्थोधनुर्द्धरः ॥ तत्रश्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवानीतिर्मतिर्मम ७८ ॥

इतिश्रीमन्महाभारते शतसहस्रसंहितायांवै यासिक्यांभीष्मपर्वणिश्रीमद्भगवद्गीतासूप निषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णा र्जुनसंवादेमोक्षसंन्यासयोगोनाम अष्टादशोऽध्यायः॥१८॥

शुभम्भूयात् ॥

हे धृतराष्ट्र कृष्ण और अर्जुन का यह सांख्य योग कर्म्म योग कर्म्म संन्यास योग संन्यास योग आत्मसंयमयोग ज्ञानविज्ञानयोग महापुरुषयोगराज विद्याराजगुह्ययोग विभूतियोग विश्वरूपदर्शनभक्तियोग क्षेत्रक्षेत्रज्ञनिर्देश प्रकृतिगुणत्रय विभागयोग पुरुषोत्तम प्राप्तियोग देवासुर सम्पत्तियोग त्रिगुणविभागयोग मोक्ष संन्यासयोगरूप सम्बाद अतिअद्भुत औरपुण्य दायकजब

जब स्मरणहोताहै तब तबअति सन्तोषको प्राप्तहोताहूं ७६हेधृतराष्ट्र श्रीकृष्णपरमात्मा के उसपूर्वोक्त विश्वरूप कोजिसके अनेकबाहु अनेकउदर अनेकमुख अनेक नेत्र हैं और जो अनन्त रूपहै और जिसका आदिमध्य अंत नहीं है और जो सर्व स्वरूपहै और जो किरीट कुण्डल गदा चक्र धारण किये है और जो तेजोरूप होकर सब दिशाओं में इसप्रकार प्रकाशमानहै कि कोई उसे देख नहीं सक्ताहै और जो सब तरफ अपरमित अग्नि सूर्य की कान्तिवाला है जो नाश रहिततथा सब कार्य कारणसेपरे है और जो इस संसारकी उत्पति रक्षा प्रलय का हेतु है और सनातन धर्म्म का रक्षक है ऐसे जब जब स्मरण करताहूं तब तब मैं अति आश्चर्य को प्राप्त होकर बारम्बार हर्षित होताहूं ७७ हे धृतराष्ट्र जिधर श्रीकृष्ण योगेश्वर और गाण्डीवधनुष धारी अर्जुन हैं उधरही राज्य लक्ष्मी जय वृद्धि औ नीति ध्रुव है यह मेरा मतहै ७८ ॥

दोहा ॥

टीका है यहि ग्रंथ में संस्कृतकी विस्तार ॥
जाहिदेखि अति विमलमति सुजनहुं पावतपार १

भाषा की टीकाजु यह मूलहि के अनुसार ।
कियमुंशीहरिबंशजिमि होय ज्ञात सबसार ॥

इतिश्रीमोक्षयोगनामकअठारहवांअध्याय
समाप्तहुआ १८ ॥

इति ॥

हक़ तसनीफ़ महफ़ूज़ है बहक़ नवलकिशोर ग्रन्थालय

११ जुन् २ वर्क़

———

कालिक कमल सरिस प्रफुल्लित करादियाहै कि जिस को भाषामात्र के जानने वाले पुरुष भी जानसक्ते हैं ॥

मनुस्मृतिसटीकका विज्ञापन ॥

सम्पूर्ण धर्मशास्त्रों का अग्रणी व सकल धर्मानुरागियों से पूजित यह मनुस्मृतिग्रन्थ जिसकी मान्यता व मर्यादाका विस्तार अच्छेप्रकार संसारमें है—यद्यपि इस ग्रन्थके बहुतसे अनुवाद व्रज, यामिन्यादि भाषाओं में कियेगये हैं परंतु उनमें से कोई भी ऐसा नहीं है जिससे प्रत्येक वार्ताओंका समाधान सब कोई सुगमतासे समझकर उसके तात्पर्यको जानलेवें इस कारण सम्पूर्ण धर्म कर्मानुरागियों व विद्यारस विलासियोंके उपकारार्थ व अलीगढ़की भाषा संवर्द्धिनी सभा की सहायतार्थ सकल कर्म धर्म धुरीण मर्य्यादा लवलीन पुण्यपनि गुणिगण प्रवीन सर्वैश्वर्य्य भूषित दोषादूषित उत्तमवंशी दुष्टाशयध्वंशी श्रीमान् मुन्शी नवलकिशोर (सी, आई, ई) ने बहुतसा द्रव्य व्यय करके धर्मशास्त्राग्रगण्य सकल गुणिगण मंडली मंडन महामहोपाध्याय श्रीपंडित मिहिरचंद्रजी से अन्य धर्म शास्त्रग्रन्थों के तात्पर्यों से संबलित व सारोंसे मिश्रित और सकल टीकाओंके रहस्यों से युक्त उक्तग्रंथ का पदच्छेद अन्वय तात्पर्य व भावार्थ से भूषित अच्छे प्रकार देशभाषामें विवरणकराय मन्वर्थ भास्करनाम तिलक मूलश्लोकों सहित लक्ष्मणपुरस्थ स्वयन्त्रालय में मुद्रितकर प्रकाशित किया—संसारमें यावत् कर्म धर्म

चातुर्वर्ण्य अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र, व चतुराश्रम अर्थात् ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ व संन्यासादिके हैं सविस्तार इसमें वर्णन कियेगये हैं—इसके सिवाय और भी सारे जगत्का वृत्त अर्थात् जगदुत्पत्ति स्वर्ग भूम्यादि सृष्टि वर्णन देवगणादिकोंकी सृष्टि धर्माधर्म बिबेक मनुजीकी उत्पत्ति व यक्षगन्धर्वादिकोंकी उत्पत्ति व मेघ, पशु, पक्षी, कृमि, कीट, जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज, वनस्पति, गुल्मलता वृक्षादिकों की उत्पत्ति, दिनराति प्रमाण व युगोंका प्रमाण व्रतादिकों के करनेका नियम व फल, देशोंका कथन मनुष्यों के जातकर्म व नामकरण व चूड़ाकरण यज्ञोपवीतादि की क्रिया कथन वेदके अध्ययन करनेकाढंग व नियम व इन्द्रियोंके संयमोंके उपायोंका कथन आचार्य उपाध्याय व गुरुआदि का वर्णन पितृकर्म में श्राद्धादि करने का नियम निषेध व प्रायश्चित्तादि वार्तायें सब इसमें उत्तम रीति से सविस्तर वर्णन कीगई हैं- आशा है कि जो विद्वद्वर धर्मशास्त्र व मर्यादाप्रिय महाशय इसको अवलोकन करेंगे वे परमानन्दितहो कृपाकटाक्षसे ग्रंथकर्ता व यंत्रालयाध्यक्षको आशीर्वाददेंगे और कदाचित् ऐसे बृहद् ग्रन्थके मुद्रण करने में कोई अशुद्धि रहगईहो तो उसका अपराध क्षमा करेंगे ॥

